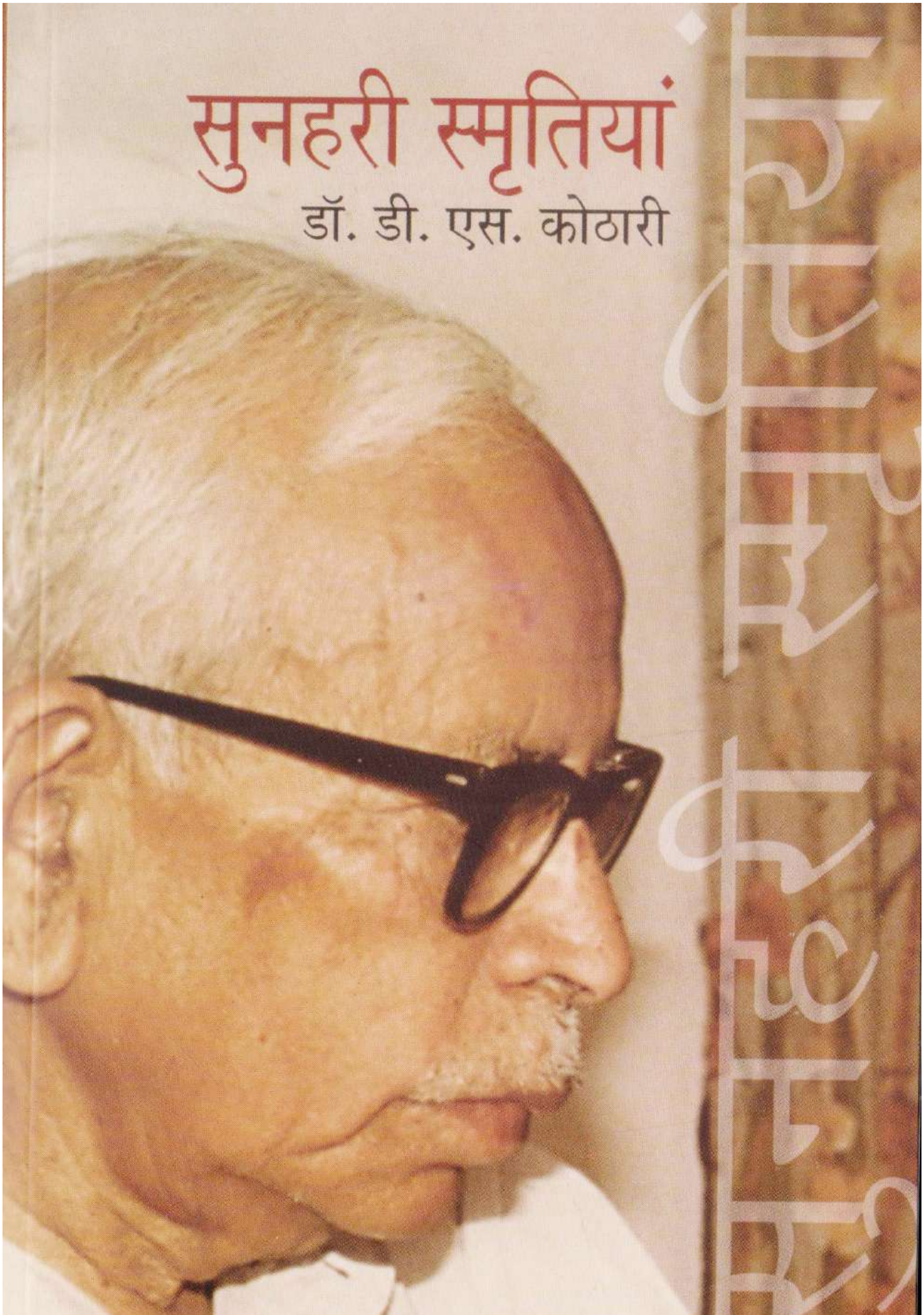
सुनहरी स्मृतियां

डॉ. डी. एस. कोठारी



डॉ. दीपिका कोठारी

राष्ट्रीय जीवनचरित

सुनहरी स्मृतियां

डॉ. डी.एस. कोठारी

डॉ. दीपिका कोठारी

nbt.india
एकः सूते सकलम्
राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत
NATIONAL BOOK TRUST, INDIA

ISBN 978-81-237-5851-0

पहला संस्करण : 2010
तीसरी आवृत्ति : 2019 *(शक 1941)*

Sunahari Smratiyan : Dr. D S Kothari *(Hindi)*

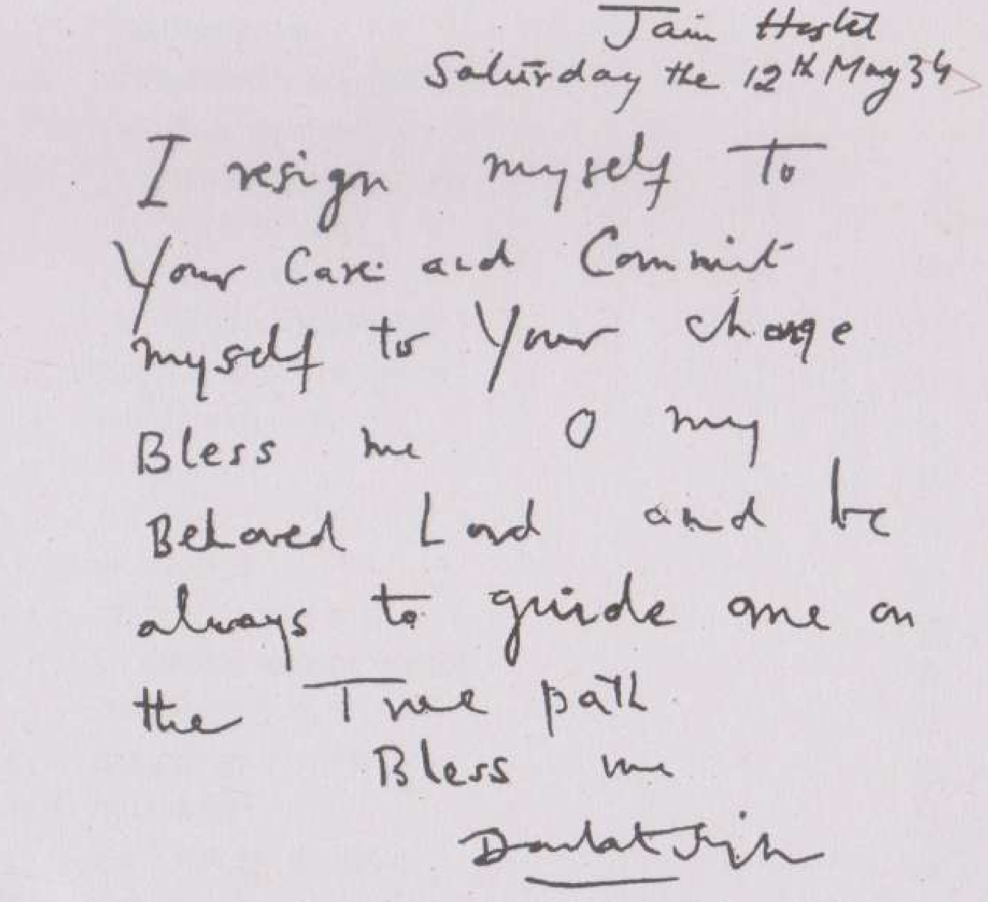
₹ 100.00

निदेशक, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत
नेहरू भवन, 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया, फेज-II
वसंत कुंज, नई दिल्ली-110070 द्वारा प्रकाशित
Website: www.nbtindia.gov.in

सादर समर्पित

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरू ।
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे ॥

हे अर्जुन! तू मुझमें मनवाला हो, मेरा भक्त बन, मेरा पूजन करने वाला हो और मुझको प्रणाम कर। ऐसा करने से तू मुझे ही प्राप्त होगा, यह मैं तुझसे सत्य प्रतिज्ञा करता हूं; क्योंकि तू मेरा अत्यंत प्रिय है ॥ गीता, 18:65 ॥


Jain Hostel
Saturday the 12th May 34

I resign myself to
Your Care and Commit
myself to Your charge
Bless me O my
Beloved Lord and be
always to guide me on
the True path
Bless me

Daulat Singh

प्रार्थना, जो डायरी के पन्नों में 18 वर्ष की उम्र से प्रारंभ हुई।

12 मई 1934 : डायरी का एक पन्ना

अनुक्रम

अपनी बात

6 जुलाई, 2006 को दादाजी की जन्मशती थी। देश में कई समारोह आयोजित किए गए। मुझे भी शिक्षा की एक पत्रिका 'अनौपचारिका' के लिए उसके 'डॉ. डी.एस. कोठारी विशेषांक' में लिखने को कहा गया। डॉ. रमेशं थानवी का यह अनुरोध मैंने अपनी स्मृतियों में से कुछ घटनाओं को लिखकर पूरा किया। इस लेख को पढ़कर नेशनल बुक ट्रस्ट के श्री पंकज चतुर्वेदी ने मुझसे दादाजी की जीवनी लिखने का अनुरोध किया। मैंने स्मृतियों से दादाजी के जीवन के क्षणों को माला में पिरोने की कोशिश की है। थानवी जी की प्रेरणा से ही मैंने अपने अनुभव लिखने का मन बनाया और अब लगता है कि अपनी बात ही सच्ची बात होती है, फिर चाहे वह एकपक्षीय सच ही क्यों न हो।

इस कार्य में मुझे अपने परिवार के सभी सदस्यों का सहयोग प्राप्त हुआ। मैं कृतज्ञ हूं। प्रो. लक्षमण कोठारी, डॉ. ललित कोठारी, प्रो. आर. सी. भंडारी, श्री प्रवीण कोठारी तथा श्री विनय कोठारी का प्रोत्साहन एवं योगदान विशेष रहा है। दादाजी के उन तमाम सहकर्मियों, मित्रों एवं विद्यार्थियों को धन्यवाद, जिन्होंने गुरु के प्रति अपने उद्‌गारों को लिपिबद्ध किया और मैंने उनको सहज ही उद्धृत कर दिया। नेशनल बुक ट्रस्ट के श्री पंकज चतुर्वेदी को विशेष धन्यवाद, जिन्होंने मुझे समय सीमा में न बांधते हुए सहज कार्य करने का मौका दिया। यह कार्य उनके सहयोग व धैर्य के बिना संभव न हो पाता।

उन सभी गुरुजनों को नमन, जिन्होंने मुझे ज्ञान के अथाह सागर में डुबकी लगाने को प्रेरित किया, मुझे शिक्षित किया!

दीपिका कोठारी

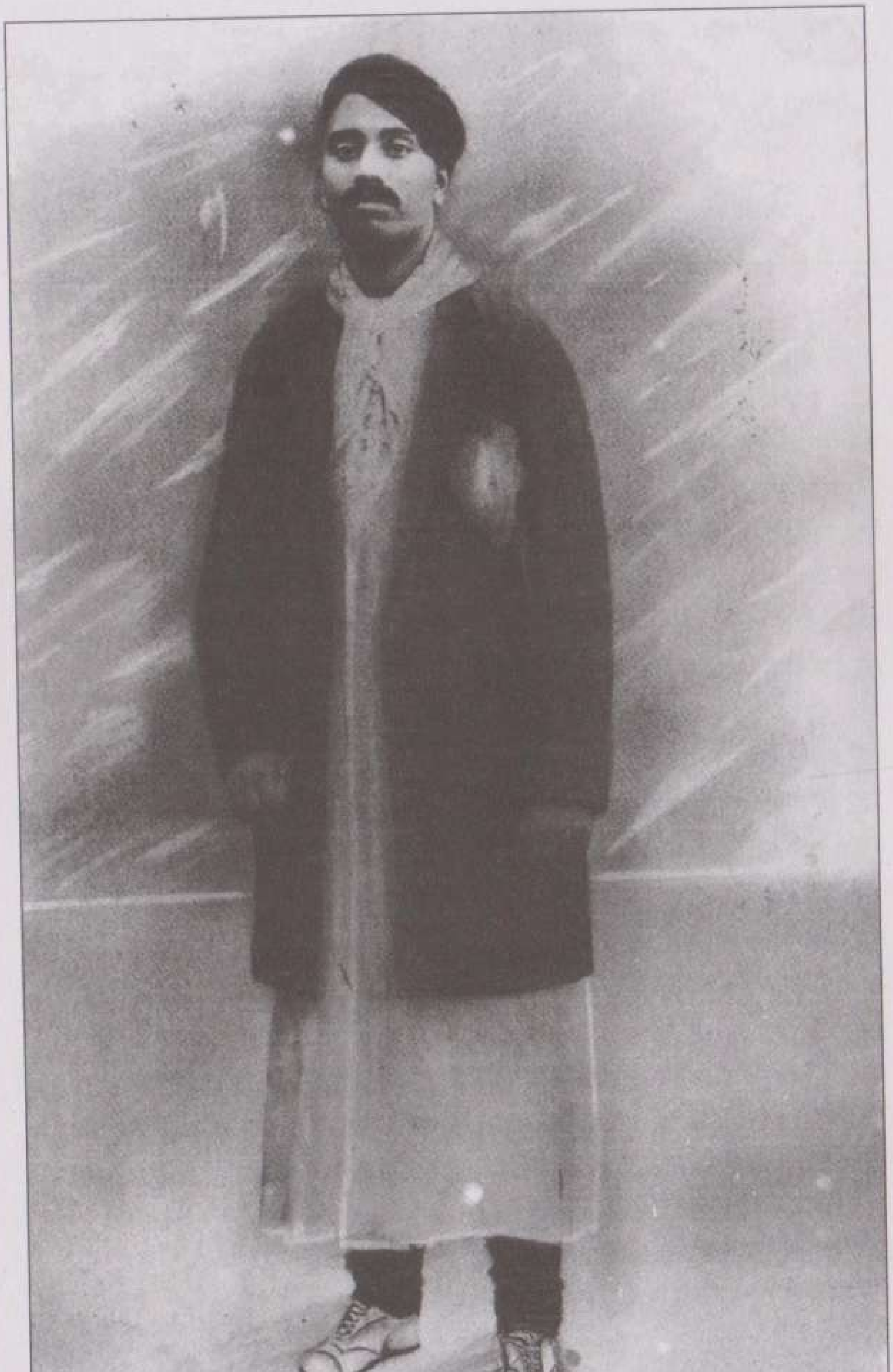
प्रस्तावना

अपने दादाजी के जीवन के बारे में लिखना मुझे स्वयं को असमंजस व दुविधा में डालने जैसा लगा। किसी व्यक्ति के जीवन की घटनाएं व कार्य लिख देना इतिहास का हिस्सा बन सकते हैं, लेकिन उस व्यक्ति के जीवन ने किस प्रकार पीढ़ियों को प्रोत्साहित व प्रभावित किया यह बात शब्दों में कैसे समेट सकते हैं? जो भी लिखा जाएगा, क्या वह उस व्यक्ति के पूरे व्यक्तित्व का सही आकलन होगा? जीवन के अनुभव गहराइयों तक जाते हैं। अनुभवों के आधार पर व्यक्ति जिस आंतरिक प्रगति व परिवर्तन के पथ पर चलता है, उसका अंशमात्र ही इंसान के जीवन में परिलक्षित होता है। इसी अंशमात्र से हम किसी के व्यक्तित्व व कृतित्व का नाप-तौल कर सकते हैं।

मेरे दादाजी, डॉ. दौलत सिंह कोठारी का जीवन बहुत घटनाओं से भरा तो नहीं था, परंतु नए स्वतंत्र भारत के निर्माण में संघर्षरत लोगों के जीवन में से एक प्रेरणादायक जीवन जरूर था। आज उनका कृतित्व समाज में विद्यमान है। यही वह मूल निधि है, जिसे स्मरण किया जाता है। इस पुस्तक में दादाजी के जीवन की कुछ घटनाओं को उद्धृत किया गया है। कुछ घटनाओं की साक्षी मैं स्वयं हूं, जो लगभग 1973 से 1993 तक के दो दशकों की हैं। कुछ घटनाएं सुनी हुई तो कुछ पढ़ी हुई हैं। अन्य लोगों के संस्मरण उन्हीं के लेखों से लिए गए हैं, जो अंत में दी गई पुस्तकों की सूची में हैं।

परतंत्र देश में आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक संकटों से जूझते नौजवानों ने जिस लगन और उत्साह से जीवन को एक नई दिशा प्रदान की, वह कहानी मेरे दादाजी की कहानी भी है। संस्मरणों की यह यात्रा दादाजी के जीवन के कई पड़ाव से होकर गुजरेगी, जिसमें उनके संवरने से लेकर आने वाली पीढ़ी पर उनके व्यक्तित्व के प्रभाव की झलक मिलेगी।

एक पीढ़ी का अगली पीढ़ी को इस तरह संवारना मानवता की कहानी भी रही है।



पिता श्री फतेहलाल कोठारी



दादाजी का बचपन

दादाजी का बचपन विषम परिस्थितियों में गुजरा। बारह वर्ष की उम्र में उनके दादा श्री मोहनलाल जी कोठारी का देहांत हो गया। इसके मात्र 4 माह बाद ही 1918 में पिता श्री फतेहलाल जी कोठारी का भी देहांत हो गया। पिता अंग्रेजी में एम.ए थे और महाराणा हाईस्कूल के प्रधानाध्यापक थे। कहते हैं, उन्हें अंग्रेजी का शब्दकोष लगभग पूरा कंठस्थ था। वे अच्छे लोकप्रिय शिक्षक थे।

38 वर्षीय मेरे पड़दादाजी श्री फतेहलाल जी कोठारी अपने पीछे विधवा मां, पत्नी, चार पुत्र एवं एक पुत्री छोड़ गए थे। 12 वर्षीय सबसे बड़े पुत्र ही मेरे दादाजी डॉ. दौलतसिंह कोठारी थे। दादाजी का जन्म 6 जुलाई 1906 को उदयपुर, राजस्थान में हुआ था।

दादाजी की मां श्रीमती लहरबाई कोठारी कुशाग्र बुद्धि, दृढ़ निश्चय वाली साहसी महिला थीं। मेरी पड़दादीजी यानी 'बड़ी धाईजी' का एक फोटो है, जिसमें उन्होंने काले कपड़े पहने हुए हैं। तब विधवाओं की यही पोशाक थी। 1886 में जन्मीं और 1958 में उनका देहावसान हुआ। 32 वर्ष में विधवा हो गईं और जीवन के 40 वर्ष उन्होंने काले कपड़ों में ही गुजार दिए। **'कर्मठ माता'*** में लिखा है, ''इन्होंने सारा जीवन कठोर तपस्या कर, सामाजिक कुप्रथाओं से लड़ते हुए जीवन को एक महान चुनौती के रूप में स्वीकार किया। **शिक्षा स्वतंत्रता प्रदान करती है, यह एक अनपढ़ अकेली महिला कैसे समझ सकी?** पुत्रों की स्कूली शिक्षा का प्रबंध किया गया। यह एक महान निर्णय था और जिन विषम परिस्थितियों में निराशा और अंधकार की घड़ियों के बीच लिया गया, उससे यह और भी महान हो गया।''

बड़े बेटे श्री दौलतसिंह को सर सरेमल बापना इंदौर ले गए, जहां उन्होंने मैट्रिक पास की। दूसरे बेटे श्री मदनसिंह कोठारी और तीसरे श्री दुल्हसिंह कोठारी को उदयपुर में भर्ती कराया गया। चौथे बेटे श्री प्रताप सिंह कोठारी को जहाजपुर एक अन्य

---

* 'कर्मठ माता', श्री दुल्हसिंह कोठारी, द्वितीय संस्करण, सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन, एन.77, पहली मंजिल, कनाट सर्कस, नई दिल्ली-110001



रिश्तेदार के यहां भेज दिया गया। इसके बाद एक-एक कर चारों पुत्रों को उच्च शिक्षा के लिए इलाहाबाद विश्वविद्यालय भेजा गया।

अपने कष्टपूर्ण प्रारंभिक दिनों को याद कर मेरे छोटे दादाजी (श्री दुल्हसिंह कोठारी, उदयपुर) ने अपनी पुस्तक 'कर्मठ माता' में लिखा ''जो व्यक्ति आज तक घूंघट में छिपा था, वह अब बाहर निकल चुका था। माता ने हमको औषधि के स्थान पर पानी की घूंट पिलाई, फटे-पुराने कपड़े पहनने को दिए, पेट भरने को जैसी-तैसी तुच्छ व्यवस्था की और यह भी नहीं मालूम कि उन्होंने वह कैसे की। याद आता है कि उन्होने एक क्या अनेक बार सूखी-बासी रोटियां पानी में गला कर अपनी तुच्छ क्षुधा को शांत किया था तथा एक या दो ओढ़नियों से, जिन पर अनेक पैबंद लगे थे, अपने तन को ढंका। इतना होते हुए भी उन्होंने किसी के आगे हाथ नहीं पसारा। वे समझ चुकी थीं कि भीख मांगना एक ऐसी दुर्बलता है, जिससे नैतिक पतन होता है?... आत्मबल पर उन्हें पूर्ण विश्वास था, आत्मसम्मान से वे कोई समझौता नहीं करना चाहती थी।''

एक कर्मठ माता

(एक जीवन संस्मरण)



स्वर्गीय लहरबाई कोठारी
(1886-1958)

एक धर्मनिष्ठ, कर्त्तव्यपरायण, साधक माता। सामाजिक कुप्रथाओं से ऊपर उठकर धर्म के मर्म को सही समझते हुए, जीवन को एक महान् चुनौती के रूप में स्वीकार किया। आपने 72 वर्षों तक अपने व्यक्तित्व को तप, त्याग एवं साधना की भट्ठी में तपाया।

—लेखक



मेरी पड़दादीजी 'बड़ी धाईजी'

व्यक्ति के बनने व संवरने में बचपन का बहुत महत्त्वपूर्ण एवं निर्णायक हाथ होता है। बचपन में सीखी गई बातें व मूल्य जीवन की राह निर्धारित करते हैं। यह राह ही व्यक्ति को विशिष्ट बनाती है। दादाजी और उनके भाइयों के जीवन पर उनकी माता जी का गहरा प्रभाव पड़ा। माता जी की कुछ विशेषताओं का उल्लेख मैं यहां विशेष रूप से करना चाहूंगी।

(क) मेहनत की कमाई

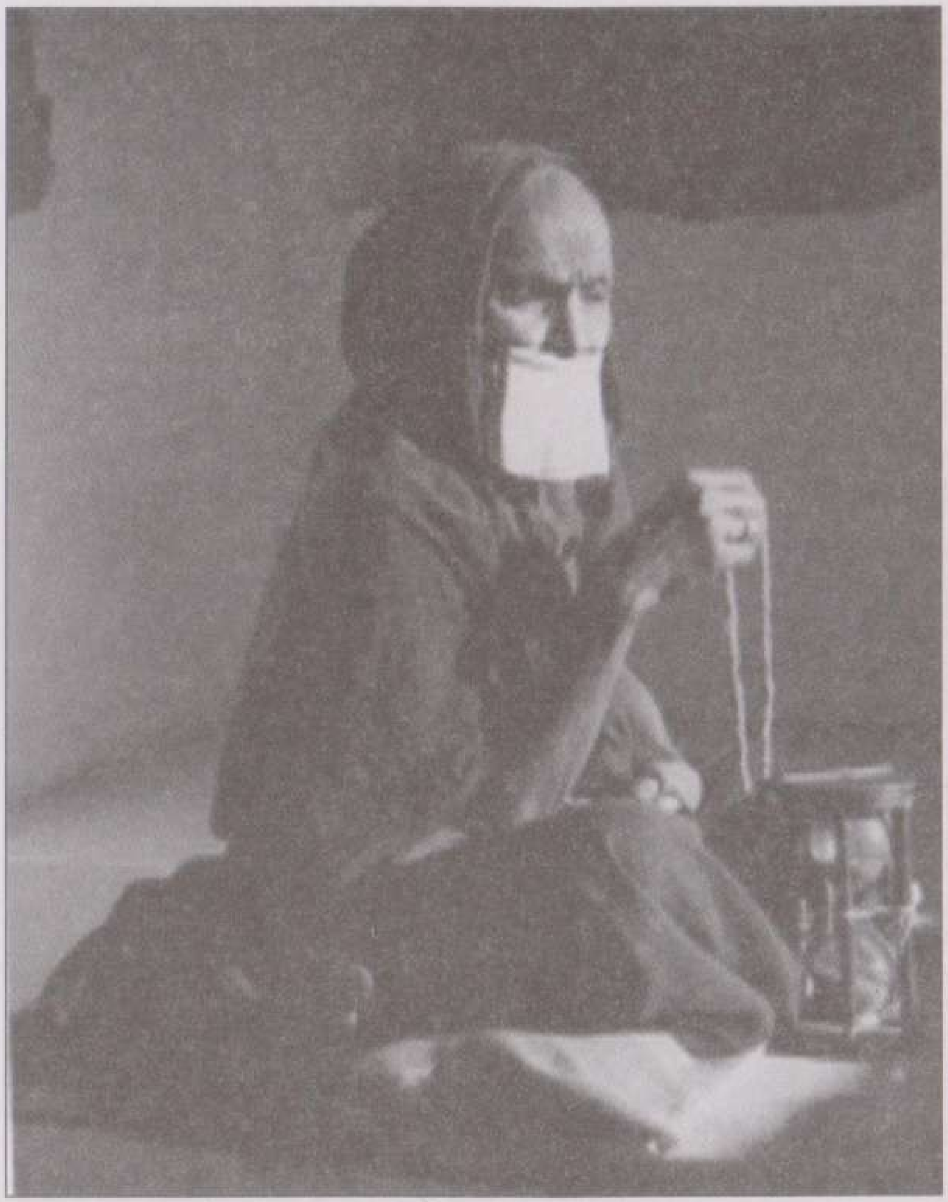
'कर्मठ माता' में लिखा है—**"माता ने अपनी धार्मिक प्रवृत्ति में संकीर्णता को कभी स्थान नहीं दिया। उनका दृष्टिकोण सदा ही विशाल, विस्तृत एवं व्यापक रहा। वे धर्म के नाम पर पोषित किए जाने वाले पाखंडों की घोर विरोधी थीं। अहिंसा, दया एवं तप के सही स्वरूप को समझते हुए उन्होंने उनको व्यावहारिक रूप दिया।"**

एक घटना का उल्लेख करते हुए उन्होंने लिखा कि जब सब बेटे नौकरी करने लगे, तब माता जी ने एक नया धंधा शुरू किया—रद्दी कागजों की थैलियां बनाकर बाजार में बेचना। यह बात मेरे छोटे दादाजी (श्री दुल्हसिंह कोठारी) को अच्छी न लगी। उन्होंने माताजी को समझाने की बहुत कोशिश की तथा अपना समय धर्म-ध्यान आदि में लगाने को कहा, लेकिन पड़दादीजी ने उनकी बातों पर जैसे ध्यान ही नहीं दिया।

"अंत में वह समय भी आ गया, जिसकी प्रतीक्षा में माता वर्षों से थीं। अब शेष जीवन के कुछ ही क्षण बाकी थे। माता ध्यान मुद्रा में लेटी हुई थीं...यकायक उन्होंने आंखें खोली और धीमे स्वर में कहने लगीं, 'मैंने जो आज तक थैलियों से पैसा कमाया है, उसे लाओ।' पैसे की थैली हाथ मे लेते हुए उन्होंने कहा, 'ले जाओ, इस पैसे को ले जाकर दीन दुखियों की सेवा में लगा दो।...यह मेरे परिश्रम की तुच्छ किंतु सच्ची कमाई है।...यह मेरी साधना का फल है'।"

(ख) आत्मबल से आत्मिक उत्थान

जब एक महिला अपने बच्चों के साथ अकेली रह जाए तो बाहरी शक्तियां तरह-तरह



'सामायिक' माता का पहला कर्त्तव्य

के सुझावों व प्रलोभनों से ध्यान आकर्षित करती हैं। ऐसे में यदि वह महिला अपने आत्मबल और धर्म के सहारे जीवन की बागडोर संभाले रहे तो इसे हम उस व्यक्ति के आत्मिक उत्थान की यात्रा ही कहेंगे। ऐसे शक्तिपुंज चरित्र जब नए पल्लवों को दृढ़ता से संस्कारित करते हैं, तब मानव जीवन अपने उत्कृष्ट रूप में निखर आता है और यही कारण है कि जिस जीवन दृष्टि से बड़ी धाईजी ने अपने बेटों को बड़ा किया, वही

जीवन दृष्टि आज तीसरी और चौथी पीढ़ी में भी कायम है। **यह निरंतरता ही भारत की खूबी है।**

(ग) तपस्वी की भस्मी

कई दशकों पूर्व एक जैन मुनि उदयपुर पधारे। वे पिछले चौदह वर्षों से केवल छाछ पर जीवित थे। प्रतिदिन घंटों सूर्य की प्रखर धूप में आसन लगा कर तपस्या करते थे। 'कर्मठ माता' में लिखा है, "तपस्या की धधकती हुई अग्नि में इस विराट तपस्वी ने अपनी समस्त वासनाओं एवं कामनाओं को भस्म कर दिया था। उनका जीवन, उनका आचरण, अपने आप में शांति का महान संदेश था। उनके दर्शनों से ही चित्त में अपार शांति अनुभव होती थी। एक निश्चित दिन उन्होंने देह त्याग दी। दाह संस्कार हुआ। अगले दिन हजारों लोगों ने तपस्वी की भस्मी को प्रसाद रूप में उठा लिया।"

बड़ी धाईजी को भी यह भस्मी प्राप्त हुई। उन्होंने बड़ी श्रद्धा के साथ इस भस्मी को घर, पड़ौस, अच्छे कार्यों में, जीवन के उतार-चढ़ाव के क्षणों में तपस्वी के प्रसाद के रूप में बांटा।

विपन्नता और संकट में धर्म और आस्था का प्रसाद ही जीवन का सहारा होता है। उनका मानना था, **"ईश्वर तो जितना गरीबों का है, उतना अमीरों का भी है; परंतु विपन्नता जितना मनुष्य को उसके समीप ले जाती है, अमीरी उतना ही दूर।"**

धर्म में अचल आस्था, संयमित और साधना पूर्ण जीवन पड़दादीजी को सच्चे अर्थों में भारतीय माताओं के अनगाए सिलसिले में एक स्तंभ के रूप में जोड़ गया।

(घ) सजग जीवन

परिवार में पहला गृह निर्माण होने वाला था। भूमि पूजन का अवसर था। बड़ी धाईजी से पूछा गया कि क्या किया जाना चाहिए? जैन धर्म में कर्मकांड नहीं किए जाते। अतः उन्होंने भस्म निकाल कर दी और कहा "इसे नींव में डाल देना। सब परिवार, बाल-बच्चे वहां भोजन कर लेना।" लेकिन मेरी छोटी दादीजी जी के परिवार के लोग पारंपरिक पूजा करवाना चाहते थे। सो उन्होंने चांदी की मछली, सर्प आदि को भी नींव में भस्म के साथ डलवा दिया। हवन समाप्त हुआ। एक-दो दिन बाद बड़ी धाईजी के कूल्हे की हड्डी टूट गई। उन्होंने इसे सबसे छिपाए रखा और महीनों तक बाहर वालों को इसका पता न चला। उन्होंने सोचा कि लोग व्यर्थ ही अशुभ बातें करेंगे। उनकी हड्डी स्वतः ही जुड़ तो गई, लेकिन टेढ़ी। वे धीरे-धीरे इसी से चलने भी लगीं। कुछ समय बाद उन्होंने बताया, "तुम लोगों ने प्राणियों के प्रतीक नींव में डाले, यह भी हिंसा के बराबर ही है। मेरी दी हुई भस्म और इन प्राणियों का आकाश में प्रचंड टकराव हुआ

और उसकी तेज वायु से मेरी हड्डी पर प्रभाव पड़ा। अब सब शांत हो गया है।'' उनकी यह बात मनगढ़ंत कहानी-सी लग सकती है। **परंतु प्रत्येक कार्य का कारण तो होता ही है। उस कार्य की प्रतिक्रिया भी होनी ही थी। यह वे खूब जानती थीं।** यदि हम अपने प्रत्येक कार्य के प्रति इतने सजग रहें तो न जाने क्या-क्या नजर आएगा और हमें अनजाने ही पवित्र तथा शुद्ध करता चला जाएगा। इसके बाद परिवार में कई घर बने, लेकिन कोई कर्मकांड नहीं किया गया। सभी सुख से जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

(ङ.) **'पीर पराई जर्णी जाणियों'**

एक सच्ची श्राविका के रूप में पड़दादीजी जैन धर्म का पालन करती थीं, लेकिन धर्म के प्रति उनका दृष्टिकोण बड़ा ही व्यापक और व्यावहारिक था। परिस्थितियों के अनुरूप धर्म को उन्होंने विविध रूपों में जाना। उनके संपूर्ण जीवन का आधार ही धर्म था। वे धर्म के लिए जीवित रहीं। अपने जीवन में विषम संघर्षों का सामना करने की परम शक्ति एवं प्रेरणा भी उनको धर्म में गहरी आस्था से प्राप्त हुई। वे अकसर गुनगुनाया करतीं थीं,

''पीर पराई जर्णी जाणियों, वणी जाणियों धर्म रे।''
दूसरे की पीड़ा जिसने जानी, उसी ने जाना धर्म रे।

वर्षों बाद यह बात दादाजी के जीवन में कुछ इस तरह अवतरित हुई। उन्होंने प्रतिमाह अपनी तन्ख्वाह में से सबसे पहले एक अंश दान के लिए निकाला। इसका कुछ भाग वे अपने दूर के रिश्तेदारों को भिजवाया करते थे, जिनमें एक बाल विधवा भी थी।

और एक दिन वह भी आया, जब उन्होंने अपनी माता की भावनाओं को देश के बच्चों के सामने कुछ इस तरह प्रस्तुत किया। उन्होंने एन.सी.ई.आर.टी. की सभी पाठ्यपुस्तकों में गांधीजी के तालिस्मान (जंतर) को प्रथम पृष्ठ पर छापने का सुझाव दिया। एन.सी.ई.आर.टी. की हर पुस्तक में छपा यह संदेश जीवन जीने की नई राह दिखाता है।

गांधी जी का जंतर

तुम्हें एक जंतर देता हूं।
जब भी तुम्हें संदेह हो या
तुम्हारा अहम् तुम पर हावी होने लगे,
तो यह कसौटी आजमाओ :
जो सबसे गरीब और कमजोर आदमी तुमने

देखा हो, उसकी शक्ल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा। क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा? यानी क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज्य मिल सकेगा जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त है?

तब तुम देखोगे कि तुम्हारा संदेह मिट रहा है और अहम् समाप्त होता जा रहा है।



दादाजी के अंतरंग मित्र मुंशीजी

उदयपुर की बात है। सत्तर का दशक था। रविवार का दिन, 11.00 बजे का समय। मुंशीजी हाथ में लकड़ी लिए अपनी कछुआ चाल से पंचायती नौहरा के हमारे पुश्तैनी घर से चलकर भोपालपुरा के वर्तमान घर पहुंचते थे। ढाई किलो मीटर की यह यात्रा न जाने कितने घंटों में तय करते थे। काली टोपी, काली शेरवानी और मटमैला-सा ढीला-ढीला पजामा, यही उनकी पोशाक थी। हाथ में भूरे रंग का कपड़े का छोटा-सा थैला, जो उनकी कलाई से लटकता रहता था, हमारे लिए किसी बहुत बड़ी नियामत से कम न था। ऐसा कभी भी नहीं हुआ कि मुंशीजी मेरे व मेरी बहन के लिए कुछ न लाए हों। कभी अंजीर, कभी अमरूद, कभी चूसने वाले आम और यह नहीं हुआ तो उनकी काली टोपी के अंदर के अस्तर की ओट से निकलते थे स्टाम्प। देश-विदेश के अद्भुत स्टाम्प। हमारे संग्रह में मुंशीजी के दिए गए स्टाम्प सबसे बहुमूल्य हैं। ये स्टाम्प वे शायद रद्दी किए गए पुराने लिफाफों से निकाल कर हमारे लिए लाते थे। उनके आगमन का पता चलते ही हम बाहर दौड़ जाते। वे धीरे से आकर मुड्ढे पर बैठ जाते और 4.00 बजे तक स्थिर बैठे रहते। वहीं टेबल पर खाना, पानी, चाय आदि लगाया जाता। **उनके द्वारा लाई गई तरह-तरह की भेंट हमें बड़े-बड़े उपहारों से कहीं अधिक आत्मीयता लिए, कौतूहल जगाने वाली, रोमांचकारी और मिठास भरी लगती।** दादाजी और मुंशीजी प्राइमरी स्कूल में एक साथ पढ़े थे। यह मित्रता अब तीसरी पीढ़ी को भी आप्लावित कर रही थी। **दादाजी से मित्रता को जाहिर करने का उनका यह तरीका बड़ा अनोखा था।**

1929 में जब पहली बार दादाजी उदयपुर से कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय, इंग्लैंड के लिए रवाना हुए, तब मुंशीजी ही उनके साथ थे। सैयद मोहम्मद नाज़िर–यही उनका नाम था। पहले दोनों उदयपुर से रेलगाड़ी द्वारा बंबई आए। दादाजी को बंबई से जहाज द्वारा अदन होते हुए इंग्लैंड जाना था। मुंशीजी भी जहाज पर चढ़ गए। जहाज चल पड़ा। बिना टिकटधारी होते हुए भी उनसे अपने मित्र को अकेले छोड़ते नहीं बन रहा था। अदन पर मुंशीजी जहाज से उतर गए और न जाने कैसे लौट आए।

सुना था, अंग्रेजों के जमाने में मुंशीजी भाप के इंजन के ड्राइवर थे। जब कभी भी



दादाजी अपने घर उदयपुर आते तो घूमने व रिश्तेदारों से मिलने जाते समय मुंशीजी सदा उनके साथ रहते। यह जोड़ी लोगों को बड़ी विचित्र लगती थी, लेकिन जो बात इन दोनों को एक किए हुए थी, वह थी दोनों के तन-मन की सादगी।

मुंशीजी जैसा शांत, सहज और वफादार व्यक्ति आज शायद ही कोई मिले। उनके व्यक्तित्व में किसी प्रकार की कोई लहर या तंरग नहीं देखी जा सकती थी। अंतिम दिनों में वे अकेले थे। इसलिए हमारे पुश्तैनी मकान के नीचे के एक कमरे में रहते थे। उसमें चारों तरफ कागजों के ढेर, रद्दी की दुकान-सा दृश्य उपस्थित करते थे। वे इतने शांत थे कि सर्दियों की धूप में बैठे एक बार उनके घुटने पर एक चिड़िया आकर बैठ गई और बैठी ही रही। मेरे काका ने उसकी तस्वीर भी उतार ली। सभी उन पर खूब हंसते थे, मुंशीजी भी खूब हंसते थे। दादाजी और मुंशीजी की आपसी आंतरिक क्रिया क्या थी पता नहीं, लेकिन वे दोनों मुड्ढे पर बैठे घंटों बिता देते थे। बात कम ही करते थे। दोनों को एक-दूसरे की उपस्थिति पूरक लगती थी। कहते हैं, मुंशीजी के पास दुनिया की महान हस्तियों के पत्र आदि थे। कुछ विशेष तो था ही।



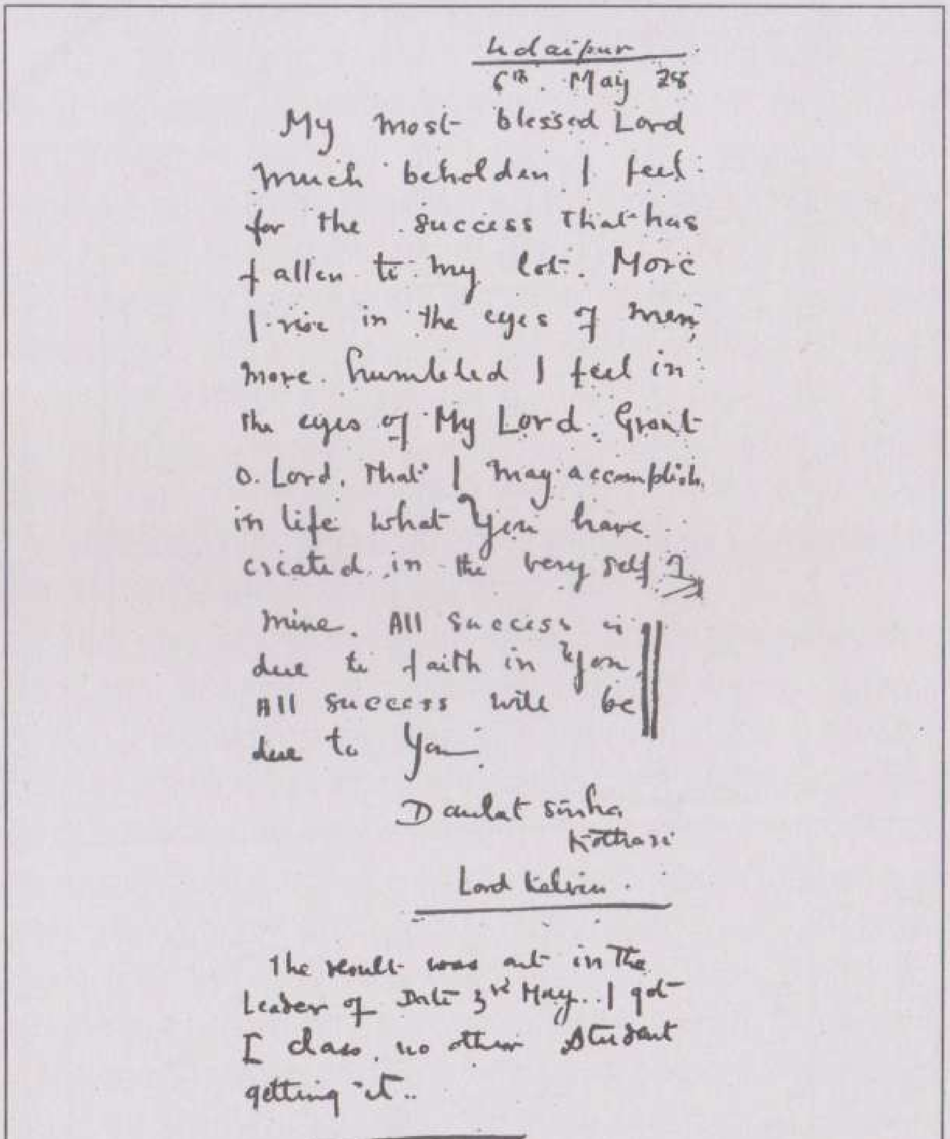
छात्र जीवन की झलकियां

पिता·श्री फतेहलाल कोठारी की अल्प आयु में मृत्यु के बाद उनके मित्र सर सरेमल बापना, दीवान, होल्कर स्टेट ने दादाजी को इंदौर बुलाया और पढ़ाई की व्यवस्था की। यहीं से उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा (1922) द्वितीय श्रेणी में पास की। शिक्षा की यह पहल दादाजी के जीवन की सबसे कठिन, कष्टदायक लेकिन निर्णायक भूमिका अदा करने वाली पहल थी।

इसके बाद यह उचित समझा गया कि वे उदयपुर में ही पढ़ें। अतः उन्होंने हाल ही में प्रारंभ हुए इण्टरमीडियेट कॉलेज में दाखिला लिया। अपने असहाय परिवार के पास वापस लौटना अवश्य ही सुखद रहा होगा। इण्टरमीडियेट में उन्हें प्रथम श्रेणी में प्रथम स्थान मिला। अग्रेंजी को छोड़ कर सभी विषयों में विशेष योग्यता मिली। **यू.पी. बोर्ड जो तब संपूर्ण यू.पी., सेंट्रल प्रोविंस, सेंट्रल इंडिया व राजस्थान को मिला कर बना था, में प्रथम स्थान पाना उनके जीवन का स्वर्णिम अध्याय रहा होगा।** इस परीक्षा परिणाम से प्रसन्न होकर मेवाड़ के महाराणा भूपाल सिंह जी ने उनके आगे अध्ययन के लिए पचास रू. प्रतिमाह की काफी अच्छी छात्रवृत्ति स्वीकृत की। यहीं से उनकी यात्रा सुगम बनती चली गई। उनके छात्र जीवन की बहुत कम घटनाएं आज ज्ञात हैं। शायद संघर्षपूर्ण दिनों को कोई भी याद नहीं रखना चाहता।

1924 में दादाजी बी.एस.सी. करने इलाहाबाद यूनिवर्सिटी पहुंचे। तब इलाहाबाद यूनिवर्सिटी में डॉ. मेघनाद साहा (भौतिकी), डॉ. एन. आर. धर (रसायन विज्ञान) तथा डॉ. ए. सी. बेनर्जी (गणित) पढ़ाते थे। डॉ. साहा का नाम देश-विदेश में विख्यात था और उनका शिष्य होना गर्व की बात थी। जल्दी ही सभी दादाजी की प्रतिमा के कायल हो गए। 1928 में एम.एससी. की परीक्षा प्रथम श्रेणी में (वायरलैस अब इलैक्ट्रॉनिक्स स्पैशियल) विषय में पास करने वाले वे एकमात्र छात्र थे।

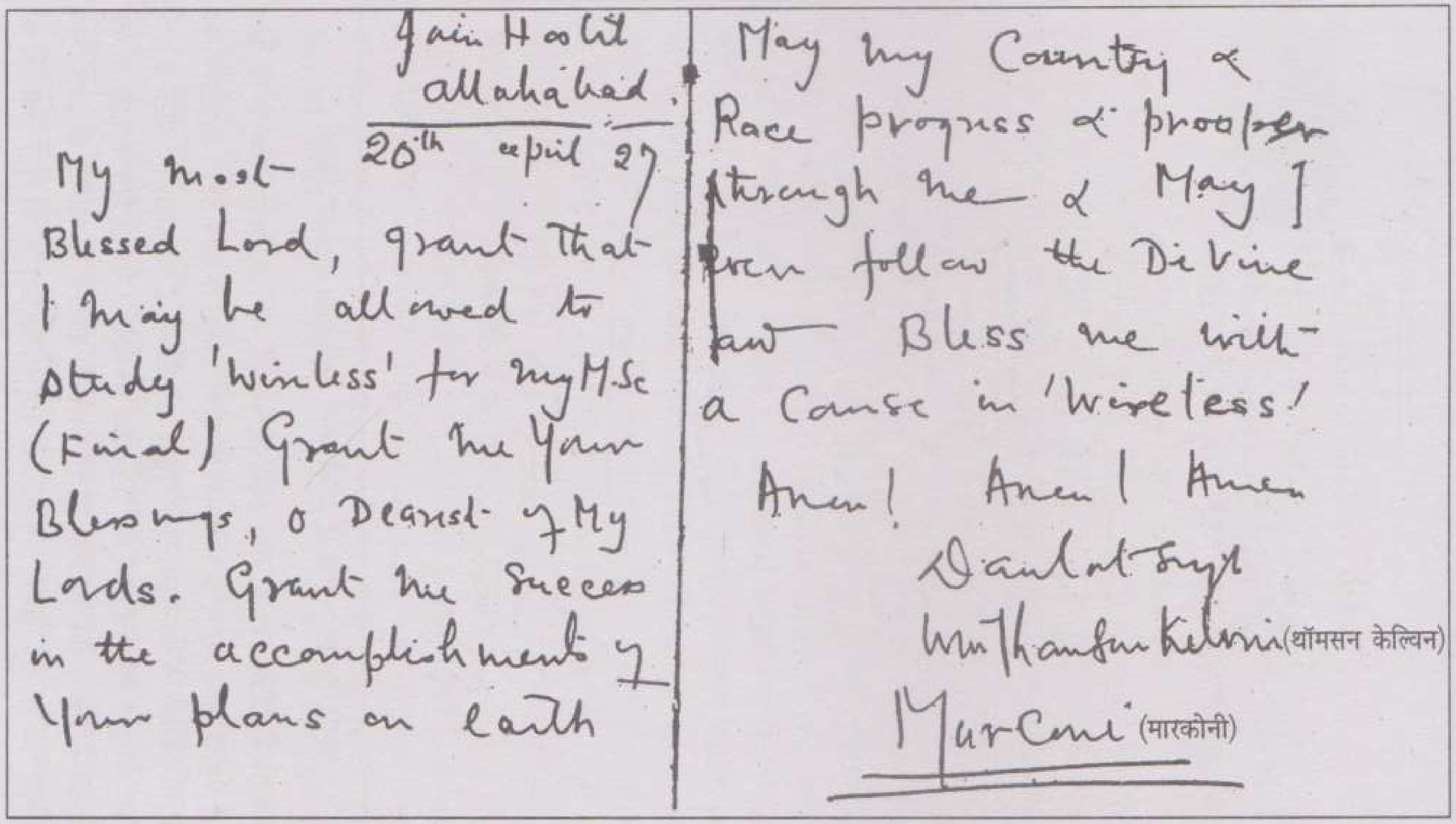
इलाहाबाद के दिनों को याद करते हुए डॉ. डब्लू. वी. भागवत लिखते हैं कि वे कोठारी से जीवन में कुछ ही बार मिले थे, लेकिन उनसे मित्रता का अनकहा लाभ उन्हें जीवन भर मिला। 1927 की बात है। भागवत तब रसायन विज्ञान में एम.एससी. (उत्तरार्द्ध) में थे और श्री मुंगरे, कोठारी से एक साल पीछे थे। श्री मुंगरे को भौतिकी के


Udaipur
6th. May 28
My most blessed Lord
much beholden I feel
for the success that has
fallen to my lot. More
I rise in the eyes of men,
more humbled I feel in
the eyes of My Lord. Grant
O. Lord, that I may accomplish
in life what You have
created in the very self of
mine. All success is
due to faith in You,
All success will be
due to You.
Daulat Sinha
Kothari
Lord Kelvin.

The result was out in the
Leader of Date 3rd May. I got
I class, no other student
getting it..

डायरी के पन्ने : कक्षा में अकेले प्रथम श्रेणी प्राप्त करने पर लिखा।

प्रयोग करने में कठिनाई आती थी। उनके शिक्षक डॉ. घोष थे, लेकिन जब भी डॉ. घोष से कोई सवाल पूछने जाता तो वे तपाक से पूछते "कहां से आए हो?" उनका मानना था कि यदि किसी ने बी.एससी. इलाहाबाद से नहीं की है तो हाल यही होना है। श्री मुंगरे इस प्रश्न से तंग आ चुके थे। उन्हें एक तरकीब सूझी। उन्होंने कोठारी से एक विद्युत संबंधी प्रयोग का सेटअप लगवाया। फिर कोठारी के सामने तीन-चार बार उसका अभ्यास भी कर लिया। जब कोठारी वहां से चले गए तो श्री मुंगरे ने प्रयोग को



Jain Hostel
allahabad.
20th april 27

My most Blessed Lord, grant That I may be allowed to study 'wireless' for my M.Sc (Final) Grant me Your Blessings, O Dearest of My Lords. Grant me Success in the accomplishments of Your plans on earth

May my Country & Race progress & prosper through me & May I ever follow the Divine law — Bless me with a Cause in 'Wireless'!

Amen! Amen! Amen

Daulat Singh
Wm Thomson Kelvin (थॉमसन केल्विन)
Marconi (मारकोनी)

डायरी के पन्ने : प्रत्येक कार्य व सफलता के लिए ईश्वर को समर्पण। साथ ही वैज्ञानिकों का स्मरण भी।

बिखेर दिया और डॉ. घोष को मदद के लिए बुलाया। डॉ. घोष ने अपने पुराने अंदाज में वही प्रश्न दोहराया, "कहां से आए हो?" मुंगरे ने फिर सफाई दी, "सर! मैं आपको कई बार बता चुका हूं और इसलिए आपसे पूछने दौड़ता हूं।" डॉ. घोष ने घंटे भर प्रयोग सेट करने की कोशिश की, लेकिन सफल न हो सके; क्योंकि श्री मुंगरे ने जानबूझ कर तारों को अव्यवस्थित कर दिया था। फिर मुंगरे ने स्वयं कोशिश करने का आग्रह किया और प्रयोग सेट कर दिया। डॉ. घोष आश्चर्य में पड़ गए। डॉ. घोष को सबक सिखाने की श्री मुंगरे की तरकीब काम कर गई। इसके बाद डॉ. घोष ने अपना सवाल फिर कभी नहीं दोहराया। कोठारी को कभी पता नहीं चला कि उन्होंने अनजाने ही अपने मित्र को परेशानी से बाहर निकाला था।'

एक बार पुनः अपना प्रैक्टिकल कार्य समय पर न कर पाने के कारण श्री मुंगरे ने कोठारी से पिछले वर्ष की नोटबुक मांगी जो उन्होंने सहज ही दे दी। श्री मुंगरे ने उसे हुबहू कॉपी किया और डॉ. घोष को फिर आश्चर्यचकित कर दिया। न तो शिक्षक और न ही मित्र को कभी इसका पता चल सका।'

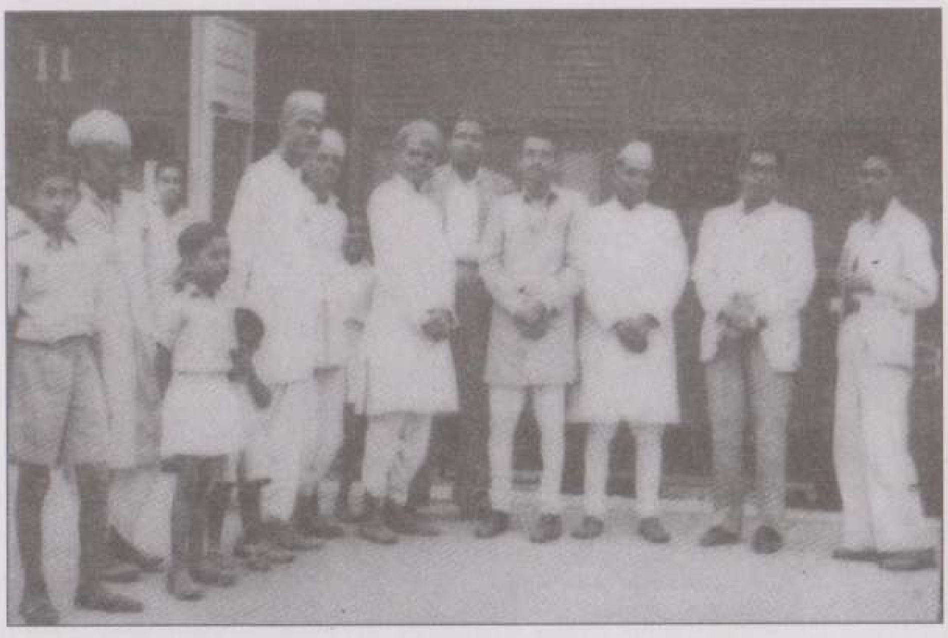
तीसरी घटना का वर्णन करते हुए डॉ. भागवत ने लिखा है कि वे और एक अन्य छात्र डॉ. दुबे प्रयोग कर रहे थे कि अचानक गेल्वेनोमीटर से जुड़े शीशे का धागा लगभग टूट गया। वे दोनों घबरा गए। यह एक कीमती उपकरण था और डॉ धर भी कड़क शिक्षक थे। तभी श्री भागवत को एक तरकीब सूझी। वे तुरंत कोठारी को बुला लाए। कोठारी सभी की मदद को हमेशा तैयार रहते थे। जैसे ही कोठारी ने गेल्वेनोमीटर को हाथ लगाया कि धागा टूट गया और शीशा गिर पड़ा। कोठारी को बड़ा आश्चर्य हुआ, लेकिन दोनों मित्रों ने उन्हें सांत्वना दी कि इसमें उनका कोई दोष नहीं है और कोठारी चले गए, लेकिन तभी गुरु डॉ. धर आ पहुंचे। उपकरण की बदहाली देखते ही वे बरस पड़े। श्री भागवत को डांटा कि 'जब से उन्होंने युनिवर्सिटी में दाखिला लिया है, तब से हर उपकरण को बिगाड़ कर रख दिया है। लैकिन भागवन ने अपना बचाव करते हुए कहा कि जब यह उपकरण काम नहीं कर रहा था, तब हमने कोठारी को बुलाया और ठीक करते समय यह उनसे टूट गया। "ऐसा क्या?" इतना कहकर डॉ. धर वहां से चले गए। ऐसी थी कोठारी की प्रतिष्ठा अपने शिक्षकों व छात्रों के बीच।'

डॉ. भागवत आगे लिखते हैं कि **कोठारी अपने जीवन में उच्च पदों पर रहे, लेकिन उन्होंने अपने कॉलेज के मित्रों को कभी नहीं भुलाया। मित्रों ने उनसे सीधे कभी मांग नहीं की, क्योंकि कोठारी ने उनकी जरूरतों का हमेशा ध्यान रखा। ये जरूरतें देश में नये विश्वविद्यालयों की स्थापना, उनके विस्तार, नए पाठ्यक्रमों के लिए विदेशी सहायता से लेकर शिक्षकों, कर्मचारियों, प्रयोगशालाओं, लाइब्रेरी, भवन निर्माण आदि से जुड़ी थीं। नए भारत का निर्माण जो हो रहा था।**



फिर आना भाई

डॉ. एन. एस. निगम दादाजी से एक वर्ष जूनियर थे। 1925 में छात्र जीवन के दिनों को याद करते हुए निगम साहब लिखते हैं, ''मेरी तरह कई छात्रों की यह इच्छा होती थी कि कोठारी से मित्रता बनाएं। जब किसी छात्र को भौतिकशास्त्र में कठिनाई होती थी, तो वे तुरंत कोठारी के पास चले आते।'' वे लिखते हैं कि 1927 में वे लंबी बीमारी की वजह से कक्षाओं में नहीं जा सके। परीक्षा पास में आई जानकर उन्होंने अपने सीनियर श्री डी. पी. माथुर से मदद चाही। माथुर जो कोठारी के समकक्ष थे, ने सलाह दी, **''अगर तुम भौतिकी समझना चाहते हो, तो तुम्हें कोठारी के पास जाना होगा।''** 'तब एक सहपाठी के लिए इस तरह के विचार ने मुझे आश्चर्य में डाल दिया था। मात्र 21 वर्ष की उम्र में इस तरह का सम्मान डॉ. कोठारी अपने सहपाठी छात्रों से पाते थे।' श्री निगम जब डॉ. कोठारी से पहली बार मिले, तो उन्हें अपने इस नए मित्र पर गर्व



राणा प्रताप रेलवे स्टेशन, उदयपुर से इलाहाबाद जाते हुए (दाएं से चौथे)।



रक्षा मंत्रालय की कार व ड्राइवर के साथ, अपने विश्वविद्यालय आवास पर।

हुआ था। श्री निगम लिखते हैं, "जैन हॉस्टल के उनके कमरे से विदा लेते कोठारी के वे आत्मीयता भरे शब्द **'फिर आना भाई!'** उन्हें हमेशा याद रहे।"



'दैव' कृपा

गीता के 18 वें अध्याय का 13वां और 14वां श्लोक है,

पञ्चैतानि महाबाहो कारणानि निबोध मे।
सांख्ये कृतान्ते प्रोक्तानि सिद्धये सर्वकर्मणाम् ॥ (13)

हे महाबाहो! संपूर्ण कर्मों की सिद्धि के लिए ये पांच कारण सांख्य सिद्धांत में कहे गए हैं, उनको तू मेरे से भली प्रकार जान।

अधिष्ठानं तथा कर्त्ता करणं च पृथग्विधम्।
विविधाश्च पृथक्चेष्टा दैवं चैवात्र पञ्चमम् ॥ (14)

*इस विषय में अर्थात् कर्मों की सिद्धि में **अधिष्ठान** और कर्त्ता तथा अलग-अलग करण (जिन-जिन इंद्रियों और साधनों के द्वारा कर्म किए जाते हैं) और विभिन्न प्रकार की अलग-अलग **चेष्टाएं** एवं वैसे ही पांचवां हेतु **दैव*** (पूर्वकृत्—शुभाशुभ कर्मों के संस्कारों का नाम) *कहा गया है।*

दादाजी वैज्ञानिक थे। वे रूढ़ियों और अंधविश्वासों से ऊपर थे। उनकी गीता में गहरी आस्था थी। सांख्य सिद्धांत के अनुसार कर्म के सिद्ध होने में अन्य बातों के



केविंडिश प्रयोगशाला, कैम्ब्रिज, ब्रिटेन, 1930-1933।

Cavendish Laboratory,

Cambridge.

March 30th, 1932

Mr D.S.Kothari, of Clare College, has been a Research Student in the Cavendish Laboratory for the past three years under my general direction. For the first year he bagan some investigations on the magnetic properties of matter, but later turned his attention to work of a more theoretical character dealing with calculations connected with the constitution of stars. He has published a number of excellent papers on this general subject.

I consider that Mr Kothari has a wide knowledge of physics and has that originality of mind that is required to attack mathematical physical problems with success. The thesis which he submitted for the PhD degree was admirable, both in form and substance, and shows his ability to give an account of a subject with perspective and judgment.

I am sure that Mr Kothari will prove a successful physicist and ~~be sure to~~ do research work of originality and importance.

Rutherford

From

Professor Lord Rutherford, O.M., F.R.S.
Director of the Cavendish Laboratory, Cambridge.

नोबल पुरस्कार विजेता लॉर्ड रदरफोर्ड द्वारा अपने शोध छात्र श्री कोठारी के लिए लिखा गया पत्र।

अलावा 'दैव' का होना जरूरी है। इसे तर्क के धरातल पर माने या न मानें, लेकिन हम सभी इस हेतु के कायल जरूर हैं। **दादाजी ने अपने जीवन में दो अवसरों पर 'दैव' कृपा का होना स्वीकारा है।** वैसे तो अंतिम दिनों में वे भक्ति के रस में डूब गए थे, जिसे कम ही लोग जानते हैं। वे गीता के 9.34 व 18.65 को कई-कई बार दोहराया करते थे।

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरू।
मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः ॥ (9.34)

मुझमें मनवाला हो, मेरा भक्त बन, मेरा पूजन करने वाला हो, मुझको प्रणाम कर। इस प्रकार आत्मा को मुझमें नियुक्त करके मेरे परायण होकर तू मुझ को ही प्राप्त होगा।

जैन धर्म के भक्ताम्भर स्त्रोत की भक्ति इससे भिन्न नहीं है। उन्हें दोनों ही एक-दूसरे को पुष्ट करने वाले लगते थे।

श्री लक्ष्मीलालजी जोशी ने अपने संस्मरणात्मक लेख में दो घटनाओं का जिक्र किया है, जिनमें दादाजी ने अपने जीवन में दैव कृपा का होना स्वीकार किया है। (1) श्री जोशी दादाजी के पिता श्री फतेहलाल कोठारी के स्कूल में छात्र रहे थे। पुराने दिनों को याद करते हुए उन्होंने लिखा है, "यह संयोग ही था, जब 1924 में मैं आगरा होते हुए इलाहाबाद युनिवर्सिटी पढ़ने जा रहा था कि मेरा तांगा आगरा कालेज के ह्यूवेट होस्टल के अहाते में रुका। कोठारी बरामदे में खड़े थे और घोड़े की टापों की आवाज सुनकर उनका ध्यान मेरी ओर गया। कोठारी ने आगरा कॉलेज में बी.एससी. में दाखिला ले लिया था। मैंने उनसे पूछा, "इलाहाबाद क्यों नही गए, वहां विज्ञान की सबसे बेहतरीन पढ़ाई होती है। तुम्हारे लिए वह सबसे उपयुक्त जगह होगी।" कोठारी ने विवशता जाहिर की और बताया कि फीस जमा हो चुकी है। इलाहाबाद में दोबारा फीस भरना संभव नहीं है और यहां से फीस वापस नहीं हो सकेगी। लेकिन मेरे कहने पर वे हॉस्टल के अंग्रेज वार्डन के पास गए। एक पर्चे पर अपने इंटरमीडिएट में प्राप्त उच्च अंकों का ब्यौरा लिख कर उन्हें पेश किया। साथ ही इलाहाबाद पढ़ने की इच्छा भी जाहिर की। अंग्रेज वार्डन साहब समझदार और नेकदिल थे। वे उनकी इच्छा से सहमत हो गए और उन्होंने तुरंत फीस वापस करने का आदेश दिया। उसी दिन शाम को मैं और कोठारी इलाहाबाद के लिए रवाना हो गए। वहां उन्हें जैन हॉस्टल में भर्ती करवाया जहां जैन छात्रों को कुछ रियायत मिलती थी।"

श्री जोशी इस घटना को याद करके बताते हैं कि दादाजी का इस प्रकार आगरा से इलाहाबाद विश्वविद्यालय जाना 'दैव' कृपा के कारण ही था। यहीं से दादाजी के जीवन की नई शुरुआत होने वाली थी। उन्हें प्रोफेसर मेघनाद साहा जैसे गुरु मिले। दादाजी भी इस घटना को याद करके अपने मित्रों व अन्यों से अकसर इसका जिक्र किया करते थे और इसके पीछे दैव कृपा होना मानते थे।

दूसरी घटना श्री जोशी ने सितंबर 1930 की लिखी है, जब दादाजी शोध करने इग्लैंड गए। जब वे लंदन में इंडिया हाउस पहुंचे तो उन्हें बताया गया कि उन्हें ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में दाखिला मिला है। लेकिन वे कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय जाना चाहते थे, क्योंकि तब वहां विज्ञान में बेहतर शोध हो रहा था। उन्होंने इंडिया हाउस वालों से पुनः निवेदन किया, परंतु कोई नतीजा नहीं निकला। संयोगवश डॉ. कोठारी को एक दिन वहां श्री गुलाम अली बोहरा मिल गए जो उदयपुर निवासी थे और ऑक्सफोर्ड में इंजीनियरिंग की पढ़ाई कर रहे थे। वे डॉ. कोठारी को रविवार के दिन कैम्ब्रिज घुमाने ले गए। जब वे दोनों कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी पहुंचे तो उन्होंने विश्व प्रसिद्ध

Copy of Report to the High Commissioner for India.

I have very much pleasure in writing about Mr. D.S.Kothari. Throughout the time he has been in Cambridge, he has been a most excellent student. He is not only hardworking and conscientious, but is capable of doing really good original work. He recently submitted his thesis for the Degree of Ph.D. and his examiners, Professor Lord Rutherford and Professor Lennard Jones, spoke very warmly indeed of the excellent quality and character of his thesis.

I feel that the extension of his Studentship, which was granted last Autumn, has been more than justified by the really excellent quality of the work he has done.

He is one of the ablest Indian Students I have come across.

May 3, 1933, (sd) H.Thirkill,

President and Tutor, Clare College.

क्लेयर कॉलेज के अध्यक्ष श्री थिरकिल द्वारा लिखा गया प्रशंसापत्र।

वैज्ञानिक लॉर्ड रदरफोर्ड को लाइब्रेरी में अध्ययनरत पाया। जब डॉ. कोठारी ने हिचकिचाते हुए उनसे पूछा, **"सर! प्रो. मेघनाद साहा, इलाहाबाद यूनिवर्सिटी ने आपको मेरे बारे में लिखा होगा। मैं दौलत सिंह कोठारी..."**। इससे पहले कि वाक्य पूरा होता सर रदरफोर्ड बोल पड़े, **"हां, मिस्टर कोठारी! मैं इस समय तुम्हारा ही पर्चा पढ़ रहा हूं। यह बहुत रोचक है। क्या तुमने दाखिले की औपचारिकताएं पूरी कर ली? यदि नहीं, तो कृपया जल्दी पूरी करो। मेरी सैक्रेटरी तुम्हें इसमें मदद करेगी।"** इस तरह डॉ. रदरफोर्ड ने उन्हें अपनी टीम में शामिल करने की स्वीकृति दे दी। **लॉर्ड रदरफोर्ड ने जब यह जाना कि यह छात्र प्रो. मेघनाद साहा का विद्यार्थी है, तो उन्हें निर्णय लेने में देर न लगी।** उचित कार्यवाही के बाद दादाजी कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय की केविन्डिश प्रयोगशाला में आ गए। उनके सहशोधकर्ता दुनिया के जाने-माने वैज्ञानिक होने वाले थे। एडिंग्टन, डिराक, कपिट्जा, फाउलर, नील्स बोहर, चन्द्रशेखर आदि ग्यारह व्यक्ति एक फोटो में एक साथ खड़े हैं और उनमें से नौ को बाद में नोबल पुरस्कार मिला। डॉ. कोठारी शोध के बाद अप्रैल 1933 में भारत लौटे और इलाहाबाद विश्वविद्यालय में डेमोन्स्ट्रेटर के पद पर नियुक्त किए गए। यहीं से देश में ही रहकर विज्ञान, रक्षा विज्ञान और शिक्षा के क्षेत्रों में योगदान का लंबा सिलसिला शुरू हुआ।



गुरु की सलाह

प्रो. मेघनाद साहा रोज सुबह-शाम घूमने जाया करते थे। 1927 के दिसंबर माह में एक दिन अचानक प्रो. साहा जैन हॉस्टल पहुंचे और श्री कोठारी को अपने साथ चलने को कहा। घूमते हुए उन्होंने श्री कोठारी से पूछा, "**सरकारी नौकरी के लिए प्रतियोगी परीक्षा में बैठने का तुम्हारा कोई इरादा तो नहीं है**। डॉ. कोठारी ने कहा, "**मुझे इसकी कोई जानकारी नहीं है**।" तब अधिकांश प्रतिभावान छात्र इन परीक्षाओं में पास होकर उच्च सरकारी अफसर बनते थे। प्रो. साहा इस उत्तर को सुनकर बहुत प्रसन्न हुए, क्योंकि वे चाहते थे कि उनके छात्र विज्ञान के क्षेत्र में ही कार्य करें जिसकी देश को बहुत जरूरत थी। उन्होंने डॉ. कोठारी से इलाहाबाद विश्वविद्यालय में ही डेमोन्स्ट्रेटर के पद पर कार्य करने की पेशकश की, जो अगली जुलाई में खाली हो रहा था। डॉ. कोठारी ने सहर्ष हामी भर दी। और यह स्वीकृति ही दादाजी के जीवन को किसी महत्त्वपूर्ण कार्य के लिए तैयार करने की एक मुख्य सीढ़ी बनी।

प्रो. साहा के साथ कार्य करना एक कीमती अनुभव था। कक्षाओं के बाद वे पुस्तकालय में चाय पर छात्रों तथा शिक्षकों के साथ अनौपचारिक सेमिनार करते थे। इसमें वक्ता को पंद्रह दिन पूर्व एक विषय दिया जाता था। सभी को प्रश्न करने व अपने विचार व्यक्त करने की पूरी स्वतंत्रता थी। यदि वक्ता प्रश्नों के उत्तर न दे सके तो कोई अन्य इसे पूरा कर सकता था। अकसर ऐसा होता था कि कोठारी या प्रो. साहा ही सभी को संतुष्ट कर पाते थे। डॉ. निगम लिखते हैं, "**कोठारी हर विषय के लिए शाम के इस सेमिनार में तैयार पाए जाते थे। ऐसा व्यापक था, उनका अध्ययन**।"

इस तरह, आजाद हो रहे भारत के लिए शिष्यों की एक नई पीढ़ी को तैयार करने की प्रो. साहा की हर कोशिश कामयाब रही।



गुरु-शिष्य की अजेय जोड़ी

1928 में यू.पी. सरकार ने एम.एससी. विज्ञान के सभी शिक्षकों के लिए एक रिफ्रेशर कोर्स की शुरुआत की। भौतिक शास्त्र के लिए प्रो. साहा के अधीन इलाहाबाद विश्वविद्यालय को इसकी जिम्मेदारी दी गई। पाठ्यक्रम के उद्‌घाटन भाषण के लिए प्रो. साहा ने स्वयं के स्थान पर कोठारी को व्याख्यान देने को आमंत्रित किया। सभी शिक्षक असमंजस में पड़ गए कि एक नया एम.एससी. पास हमें क्या बताएगा। लेकिन जब श्री कोठारी ने बोलना शुरू किया तो धीमे-धीमे सभी उनके ज्ञान और समझ के कायल होने लगे और अंत में प्रशंसा करते हुए प्रसन्न हो गए।

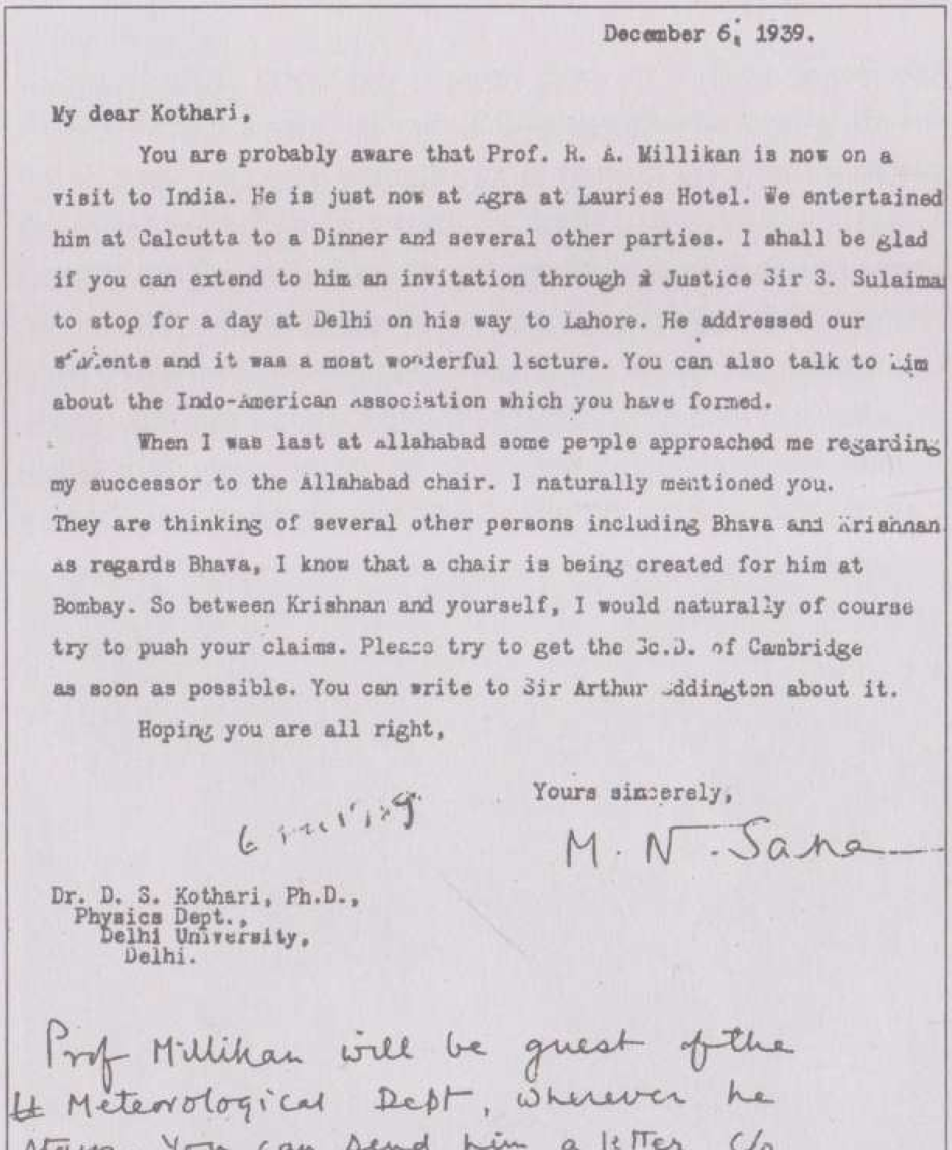
अप्रैल 1933 में डॉ. कोठारी पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त कर भारत लौटे और पुनः इलाहाबाद विश्वविद्यालय में डेमोन्स्ट्रेटर के पद पर कार्य शुरू किया, लेकिन विश्वविद्यालय ने उन्हें पिछले तीन वर्षों की वेतन वृद्धि देने से इन्कार कर दिया। इस



प्रो. एम.एन. साहा (बैठे हुए, बाएं), डी.एस. कोठारी

पर प्रो. साहा को बहुत खिन्नता व दुःख हुआ। उन्होंने डॉ. कोठारी को दिल्ली विश्वविद्यालय में रिक्त होने वाले रीडर के पद के लिए आवेदन करने की सलाह दी। डॉ. कोठारी इस पद के लिए चयनित हुए और मई 1934 में वे दिल्ली चले गए।

मई 1934 की घटना है। जब डॉ. कोठारी ने दिल्ली विश्वविद्यालय में कार्य प्रारंभ किया, तब वहां केवल बी.एस.सी की कक्षाएं पढ़ाई जा रही थी। यह छोटा-सा विभाग



December 6, 1939.

My dear Kothari,

You are probably aware that Prof. R. A. Millikan is now on a visit to India. He is just now at Agra at Lauries Hotel. We entertained him at Calcutta to a Dinner and several other parties. I shall be glad if you can extend to him an invitation through Justice Sir S. Sulaima[n] to stop for a day at Delhi on his way to Lahore. He addressed our students and it was a most wonderful lecture. You can also talk to him about the Indo-American Association which you have formed.

When I was last at Allahabad some people approached me regarding my successor to the Allahabad chair. I naturally mentioned you. They are thinking of several other persons including Bhava and Krishnan. As regards Bhava, I know that a chair is being created for him at Bombay. So between Krishnan and yourself, I would naturally of course try to push your claims. Please try to get the Sc.D. of Cambridge as soon as possible. You can write to Sir Arthur Eddington about it.

Hoping you are all right,

Yours sincerely,

M. N. Saha

6.12.'39

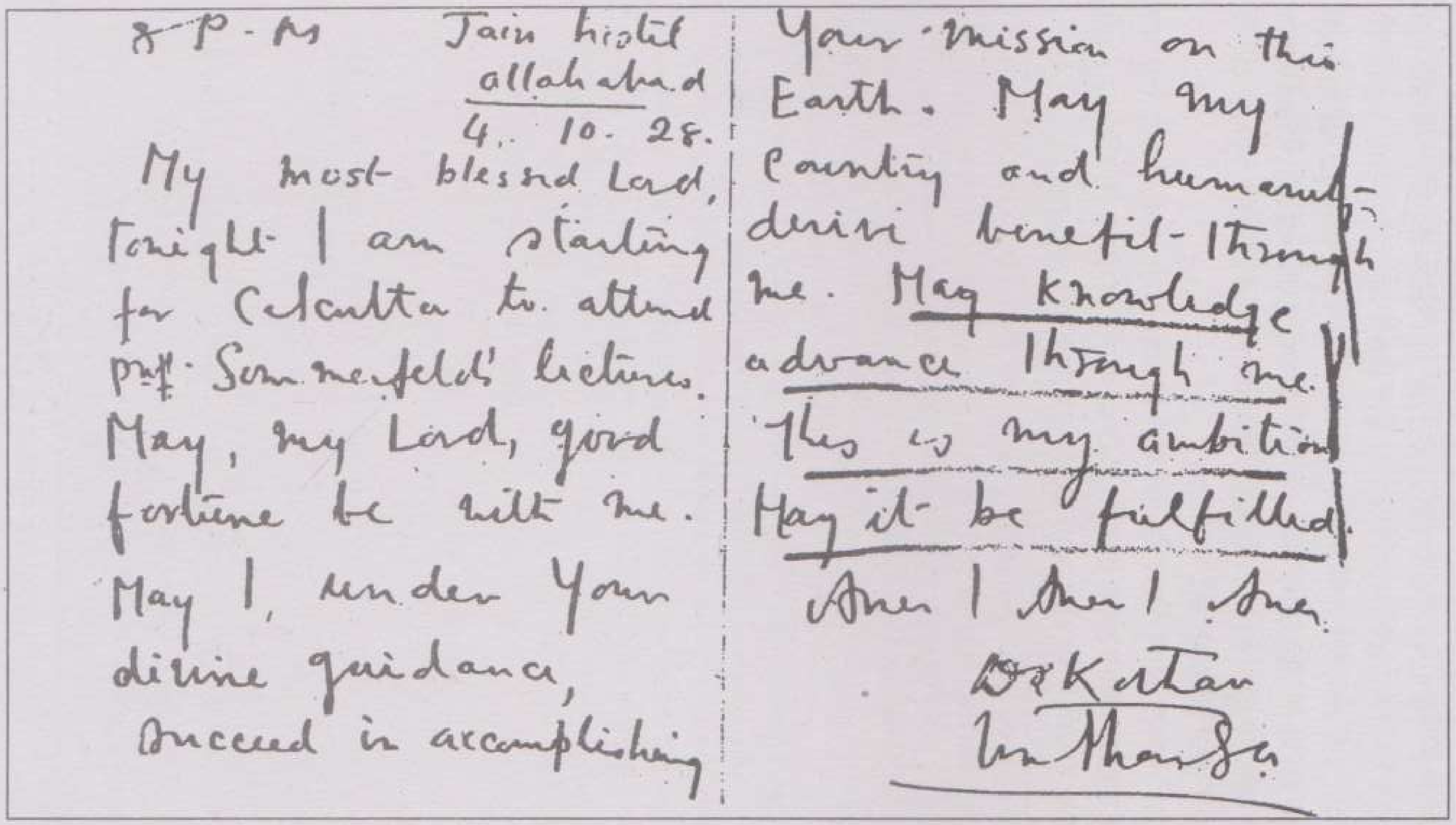
Dr. D. S. Kothari, Ph.D.,
Physics Dept.,
Delhi University,
Delhi.

Prof Millikan will be guest of the Meterological Dept, wherever he stays. You can send him a letter C/o Upper Air Obs.

गुरु प्रो. मेघनाद साहा का प्रोत्साहन भरा निर्देशात्मक पत्र।

कश्मीरी गेट में किराए की एक इमारत में चल रहा था। इलाहाबाद से इंग्लैंड और फिर इलाहाबाद में विश्व स्तरीय कार्य करने के बाद दिल्ली का यह अनुभव झटका देने वाला था। उन्हें लगा कि उनके गुरु ने उन्हें कहां भेज दिया है, लेकिन प्रो. साहा के लगातार प्रोत्साहन और अपने शिष्य में पूर्ण विश्वास ने डॉ. कोठारी में वह अदम्य साहस भरा कि कुछ ही वर्षों में दिल्ली विश्वविद्यालय का विज्ञान विभाग देश में सर्वश्रेष्ठ विज्ञान शिक्षा का केंद्र बन गया।

एक गुरु का अपने शिष्य के प्रति पूर्ण विश्वास करना तथा प्रोत्साहन व नए अवसर उपलब्ध कराना हमारी प्राचीन गुरु-शिष्य परंपरा का अनूठा सिलसिला है। यही सिलसिला दादाजी ने भी आगे अपने शिष्यों के साथ बखूबी जारी रखा।



8 P.M. Jain Hostel
Allahabad
4. 10. 28.

My most blessed Lord,
Tonight I am starting for Calcutta to attend Prof. Sommerfeld's lectures. May, my Lord, good fortune be with me. May I, under Your divine guidance, succeed in accomplishing Your mission on this Earth. May my country and humanity derive benefit through me. May knowledge advance through me. This is my ambition. May it be fulfilled.

Amen! Amen! Amen.

DSKothari
[illegible]

कलकत्ता रवाना होने से पहले लिखी गई प्रार्थना। "हे प्रभो! मैं आपके कार्य का निमित्त बनूं। ज्ञान मेरे द्वारा और समृद्ध हो।"



प्रो. सोमरफॅल्ड कलकत्ता आमंत्रित

परतंत्र भारत में विज्ञान शिक्षा के क्षेत्र में कई ऐसे नये कार्य हुए, जिनकी कल्पना हम स्वतंत्र भारत में नहीं कर सकते। 1933-34 की घटना है। कलकत्ता विश्वविद्यालय ने प्रसिद्ध जर्मन वैज्ञानिक प्रो. आर्नल्ड सोमरफॅल्ड को वेव मेकेनिक्स अर्थात् तंरग यांत्रिकी पर व्याख्यान देने के लिए कलकत्ता आमंत्रित किया। उनके छः या सात व्याख्यान होने थे। इलाहाबाद में प्रो. साहा अपने छात्रों को इससे कैसे वंचित रखते। उन्होंने तुरंत ही प्रशासन से अनुमति मांगी और डॉ. कोठारी के नेतृत्व में एम.एससी. उत्तरार्द्ध के एक दल को कलकत्ता रवाना किया। प्रो. निगम ने लिखा, "**युवा शिक्षकों में डॉ. कोठारी का चयन उनके विषय संबंधी गहरे अध्ययन, छात्रों के साथ सौहार्द्रपूर्ण व्यवहार तथा उनकी जरूरतों का ख्याल रखने में सक्षम होने के कारण किया गया था।**" डॉ. कोठारी ने छात्रों के साथ ही तीसरे दर्जे में सफर किया।'

डॉ. निगम आगे लिखते हैं कि प्रो. सोमरफॅल्ड एक दिन समीकरण लिखते-लिखते अटक गए। उन्होंने सहजता से श्रोताओं की ओर मदद के लिए देखा। प्रो. सी.वी.रमन जो वहां उपस्थित थे, ने नकारात्मक सिर हिला दिया। कुछ देर की चुप्पी के बाद एक युवक जिसने धोती, कुर्ता व कंधे पर शॉल लटका रखी थी, खड़ा हुआ और ब्लैकबोर्ड पर उस समीकरण को पूरा किया। ये थे, देश के एक और प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ. सत्येंद्र नाथ बोस।'

आजादी से पहले विश्व के प्रसिद्ध वैज्ञानिकों द्वारा भारत के नव वैज्ञानिकों को पढाना आधुनिक इतिहास का एक अनूठा उदाहरण है। इस पीढ़ी ने विज्ञान, शिक्षा, तकनीकी, रक्षा, इंजीनियरिंग आदि क्षेत्रों में जो आधारभूत योगदान दिया, वह आज उन्नतरत भारत के रूप में दुनिया के सामने है।

कलकत्ता यात्रा के अंत में डॉ. कोठारी ने छात्रों को शांति निकेतन की सैर करवाने की योजना बनाई। शांति निकेतन पहुंचने पर उन्होंने पुस्तकालय, विभागों आदि का अवलोकन किया और गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर के दर्शन किए तथा उनके साथ बिताए गए दस मिनट सभी की स्मृतिपटल पर अमिट रहे।



दिल्ली विश्वविद्यालय में

मई 1934 में 28 वर्षीय डॉ. कोठारी ने दिल्ली विश्वविद्यालय में रीडर व विभागाध्यक्ष के पद का कार्यभार संभाला। विज्ञान विभाग तब कश्मीरी गेट, दिल्ली के एक किराये की इमारत में चल रहा था। 18 जून 1934 को भौतिकी और रसायन विज्ञान विभाग का आरंभ हुआ और यहीं से दिल्ली में शुरुआत हुई विज्ञान शिक्षा के क्षेत्र में एक नए अध्याय की। भौतिक व रसायन शास्त्र को एम.एससी. के स्तर तक बढ़ाया गया। भारत सरकार ने वाइसरीगल लॉज एस्टेट के विशाल परिसर पर दिल्ली विश्वविद्यालय स्थापित करने का निर्णय लिया।

1938 में भारत के संघीय न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश सर मौरिस ग्वायर को दिल्ली विश्वविद्यालय का उपकुलपति बनाया गया। सर मौरिस के सहयोग व प्रोत्साहन और डॉ. कोठारी की दूरदर्शिता और लगन से विज्ञान विभागों के लिए नये उपकरण, पुस्तकालय, प्रतिभावान शिक्षकों की एक टीम और विश्वस्तरीय पाठ्यक्रम् के पुनर्निमाण के साथ कार्य शुरू हुआ। सरकार से 50,000 रुपए की एक मुश्त सहायता और 2500 रुपए सालाना खर्चा स्वीकृत हुआ। 1941 में देश के विभिन्न स्थानों से लगभग 200 विद्यार्थियों ने दाखिला लिया। 1943 में पहली बार देश में तीन वर्षीय बी. ए/बी.एससी. पाठ्यक्रम की शुरुआत हुई। डॉ. कोठारी ने चुनकर कई विद्वानों को दिल्ली विश्वविद्यालय में कार्य करने का आमंत्रण दिया। उनका सिद्धांत था, **''बुद्धिमानी से व्यक्तियों का चयन करना और फिर उन पर पूरा विश्वास बनाए रखना।''** भौतिकी विभाग के लिए उन्होंने गणित के माहिर शिक्षकों का चयन किया, जिनमें प्रो. एफ. सी. औलक तथा प्रो. आर. पी. भाम्भा प्रमुख थे। इन दोनों के पास भौतिकी की कोई डिग्री नहीं थी, लेकिन आगे चलकर इन्होंने भौतिकी में उच्च कोटि का योगदान दिया और भौतिक विज्ञान के उत्कृष्ट शिक्षक साबित हुए।

आज किसी एक विषय के विशेषज्ञ की प्रतिभा का उपयोग दूसरे विषय के लिए करना असंभव है। यही कारण है कि विश्वविद्यालय में प्राचीन शास्त्रों पर शोध केवल संस्कृत के विद्यार्थी ही कर सकते हैं, विज्ञान या गणित के नहीं। इसीलिए वह बहुमूल्य ज्ञान आधुनिक परिप्रेक्ष्य में विश्व के सामने आने से अवरोधित हो गया है। साथ ही

एक विषय के विशेषज्ञ अपनी समझ में संकीर्ण होते चले गए हैं। डॉ. कोठारी ने बी. एस.सी, ऑनर्स में दाखिले के लिए केवल एक शर्त प्रारंभिक परीक्षा में उत्तीर्ण होने की रखी। फिर वह छात्र किसी भी क्षेत्र का क्यों न हो।

डॉ. कोठारी के लिए हर छोटा बड़ा कार्य महत्त्वपूर्ण होता था। वे इटंरमीडिएट कक्षाओं के लिए परीक्षक बनना स्वीकारते और अपने गुरु प्रो. साहा व अन्य विद्वानों को भी बी.एससी. प्रैक्टिकल की परीक्षा के लिए दिल्ली बुलाते। विद्यार्थियों के साथ विद्वानों के इस सीधे संपर्क ने एक नई समर्पित पीढ़ी तैयार करने में बहुत मदद की।

भौतिक शास्त्र के लिए गणित में पारंगत होना जरूरी होता है। इसलिए उन्होंने **''भौतिकी के लिए प्रासंगिक गणित''** नामक पाठ्यक्रम शुरू किया, जो एक नवीन सारवान प्रयोग सिद्ध हुआ। वे प्रारंभिक दिनों से ही वैज्ञानिक खोजों व वैज्ञानिकों के जीवन से बहुत प्रभावित थे। छात्र जीवन की अपनी डायरी के पन्नों में उन्होंने ईश्वर के साथ महान वैज्ञानिकों के नाम लिखकर उनका स्मरण किया है। इसे अपने विद्यार्थियों के साथ बांटने के लिए उन्होंने **''विज्ञान का इतिहास एवं दर्शन''** नामक नया पाठ्यक्रम शुरू किया। ये कक्षाएं इतनी लोकप्रिय थीं, कि इन्हें याद करके बहुत-से पूर्व विद्यार्थियों ने अपने रोचक संस्मरण लिखे हैं।

6 व 9 अगस्त 1945 को पहला आणविक बम हिरोशिमा व नागासाकी पर गिराया गया था। विज्ञान के विनाशकारी उपयोग का भीषण नजारा दुनिया के सामने था। ऐसे माहौल में डॉ. कोठारी ने देश में ऐसे **विज्ञान और शिक्षा की नींव रखी, जिसमें पूर्व की अहिंसा व सत्य का संदेश था। मानवीय स्वभाव, सामाजिक दायित्वों और पूर्व की संस्कृति की गहरी समझ के साथ उन्होंने अपने शिष्यों और सहयोगियों को संस्कारित किया। विज्ञान के शक्तिशाली अस्त्र को शांति, प्रगति और कल्याण की ओर मोड़ दिया।** डॉ. कट्टी के शब्दों में विज्ञान का यह स्वरूप मानव सभ्यता के लिए **''विज्ञान का ईश्वरीय रूप''** था।

अपने छात्रों व शिक्षकों को विश्व स्तर के कार्य से अवगत कराने हेतु उन्होंने 1934-1943 तक पुस्तकालय कमेटी का सचिव होना स्वीकार किया। 1937 में अखिल भारतीय पुस्तकालय अधिवेशन बुलाया गया। पुस्तकालयों की व्यवस्था, नियम व विस्तार पर प्रस्ताव पेश किए गए। पुस्तकालय उनके लिए मंदिर के समान था।

1939 में जब भौतिक शास्त्र की नई प्रयोगशाला सुसज्जित की गई तो डॉ. कोठारी ने देश-विदेश के कई प्रसिद्ध वैज्ञानिकों को अपने सुझाव भेजने के लिए पत्र लिखे। कई लोगों ने अपने सुझाव व शुभ संदेश भेजे। 24 फरवरी 1940 को अल्बर्ट आइन्स्टाइन का संदेश आया। लिखा था : **''अच्छी संगति रखो, प्रेम के साथ व बिना किसी पूर्वाग्रह के कार्य करो, इस तरह तुम प्रसन्न होओगे और तुम्हें कार्य में सफलता मिलेगी।''**

THE INSTITUTE FOR ADVANCED STUDY
SCHOOL OF MATHEMATICS
PRINCETON, NEW JERSEY

February 24,1940

Mr. D.S.Kothari
Physics Department
University of Delhi,
Delhi.(India).

Dear Sir:

This is the sentence expressing my good wishes for your new Physics Laboratory:

Keep good comradeship and work with love and without pre-conceived ideas and you will be happy and succesful in your work.

Yours sincerely,

Professor Albert Einstein.

महान वैज्ञानिक अल्बर्ट आइन्सटाइन का शुभकामना पत्र।

दूसरा महत्त्वपूर्ण संदेश सर ए.एस. एडिंग्टन का था, जिन्हें उस समय खगोल विज्ञान का पितामह समझा जाता था।

"विशेष प्रसन्नता के साथ मैं नई भौतिक प्रयोगशाला की उन्नति के लिए अपनी शुभकामनाएं भेजता हूं। इस समय चाहे यह एक छोटी पहल लगे, लेकिन बड़े कीर्तिमानों के पीछे छोटी शुरुआतें ही होती हैं। तुम्हारे देश के अलावा कहीं भी इसके लिए उपयुक्त अवसर नहीं है, जहां प्राचीन वैज्ञानिक परंपरा की पृष्ठभूमि में साल-दर-साल नवजागरण हो रहा हो।"

क्लार्क मैक्सवैल के शब्दों को उद्धृत करते हुए उन्होंने आगे लिखा, "सृष्टि की न

खोजी गई विपुलता में और युवाओं की न थकने वाली नवोन्मेष मेधा में इस असीम विश्वास के साथ कि उस मेधा में यह विपुल संपदा निरंतर बरसती रहेगी, ...मैं अपनी हार्दिक शुभकामनाएं भेजता हूं।"

शीघ्र ही दिल्ली विश्वविद्यालय का भौतिकी विभाग विश्व प्रसिद्ध हो गया और देश के विश्वविद्यालयों के लिए एक आदर्श केंद्र बन गया। जब दादाजी ने रक्षा सलाहकार का पद संभाला, तब भी वे विश्वविद्यालय पढ़ाने आते थे। सभी पदों से मुक्त होकर भी वे विश्वविद्यालय से जुड़े रहे।

1981 की बात है, जब मैं दिल्ली विश्वविद्यालय में बी.एससी. (भौतिकी) की छात्रा थी। एक दिन दादाजी भौतिकी विभाग के लेक्चर थियेटर में व्याख्यान देने आए। शिक्षकों व विद्यार्थियों से हॉल भरा था। लेक्चर समाप्त होने पर जब वे हॉल से बाहर निकले तो विद्यार्थियों ने उन्हें इस तरह घेर लिया, जैसे किसी फिल्मी सितारे को नौजवान घेर लेते हैं। उन्हें बीच के लॉन में ले गए और फोटो खिंचवाई। न जाने क्या-क्या बातें की। मैं यह सब दूर खड़ी हुई देख रही थी और आश्चर्य में थी कि यह सब क्या हो रहा है?



शिक्षक जो सहज उपलब्ध था

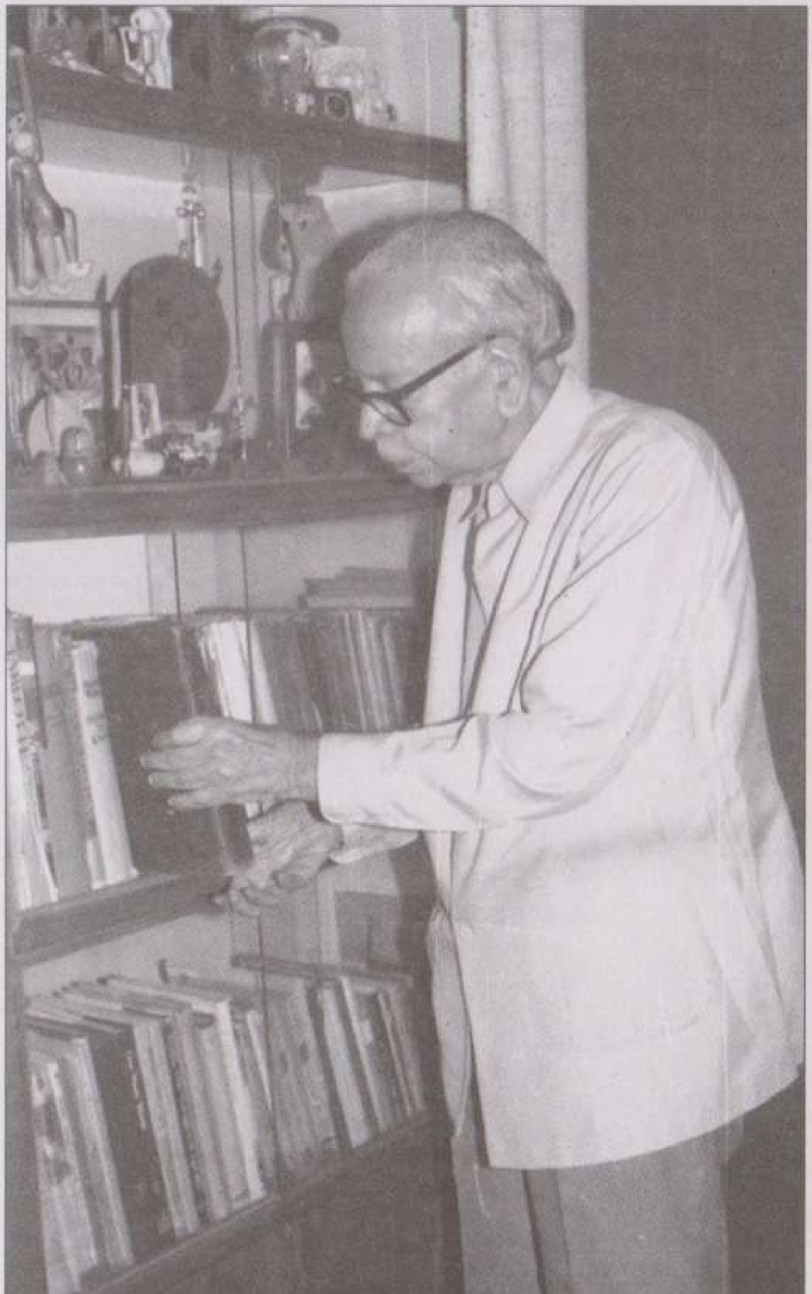
जो भी दादाजी के संपर्क में आया, उसे उनमें एक आदर्श शिक्षक और सद्‌हृदय गुरु नजर आया। कई लोगों ने अपने अनुभवों में लिखा है कि लोग उन्हें एक चलता-फिरता विश्वकोश मानते थे। समस्या किसी भी विषय से संबंधित क्यों न हो, वे उसे गहराई से समझ कर सुलझा देते थे। भौतिकी, विज्ञान, योजनाएं, शिक्षा, जीव विज्ञान, दर्शन, धर्म, मनोविज्ञान, चिकित्सा, रक्षा के शस्त्र व उपकरण, न्यूक्लियर बम, विश्वविद्यालय की समस्याएं या फिर कर्मचारियों की समस्याएं सभी को बड़े मानवीय ढंग से समझते व सुलझाते थे। उनके संवाद के स्थान विश्वविद्यालय या मंत्रालय के गलियारे, कक्षा हॉल, प्रयोगशाला, ऑफिस, घर का ड्रॉइंगरूम, बैडरूम, बरामदा, छत, बगीचा, इंडिया गेट की लॉन जो भी सुलभ हो, वहीं चर्चा शुरू हो जाती।

शुरुआती दिनों में गर्मियों की छुट्टियों में वे उदयपुर जाते थे। वहीं अपने मित्रों को भी बुला लेते। घर के अनौपचारिक वातावरण में रहकर चर्चाएं होतीं और छुट्टियों की समाप्ति पर दो-तीन विज्ञान के पर्चे विश्वस्तरीय पत्रिकाओं में छपने के लिए तैयार हो जाते। इन अवसरों पर प्रो. एफ. सी. ओलक, प्रो. पी. एल. भटनागर, प्रो. के. एस. सिंघवी, प्रो. पी. बी. भट्टाचार्य, प्रो. डी. वी. गोगटे व अन्य के नाम ध्यान आते हैं।

स्वाध्याय उनके जीवन का अंग था। पुस्तकालयों का वे भरपूर उपयोग करते थे। वे प्रायः पुस्तकें एवं पत्रिकाएं देखने स्वयं ही लाइब्रेरी जाते थे, लेकिन बाद में बढ़ती उम्र एवं स्वास्थ्य की वजह से लाइब्रेरियन उनके लिए पुस्तकें बाहर खड़ी गाड़ी तक ले आते थे। लाइब्रेरियन उनकी व्यापक रुचि के कायल हो चुके थे। कई पुस्तकें व पत्रिकाएं घर भिजवाई जातीं। नोट्स लिखने या जिरोक्स करवाने के बाद समय पर उन्हें लौटाना वे कभी नहीं भूलते।

उनके छात्र व अन्य बताते हैं कि विश्व की बेहतरीन पुस्तकों एवं विचारकों के बारे में उन्होंने तब जाना, जब वे डॉ. कोठारी की पुस्तकें उनके कमरे में इधर-से-उधर जमाते थे या उनके लिए पुस्तकें लाने या ले जाने का काम करते थे। उनके कई व्याख्यानों में विश्व के विलक्षण कार्य करने वालों की अद्वितीय पुस्तकों का उद्धरण मिलता है, जिसका सीधा लाभ छात्रों व शिक्षकों आदि ने लिया।

दादाजी का यह मानना था कि **शिक्षण (विद्या दान) एक उत्कृष्ट कार्य है और किसी विश्वविद्यालय का शिक्षक होना सर्वोच्चतम अकादमिक सम्मान है।** वे जीवनपर्यंत शिक्षा और शिक्षण से जुड़े रहे, कभी 'गुरु' बनकर तो कभी 'विद्यार्थी' बनकर।





शिष्यों के उद्गार

डॉ. कोठारी से हुई पहली मुलाकात, भविष्य के बारे में ली गई उनकी महत्त्वपूर्ण सलाह, उनकी कक्षाएं, शाम को उनके साथ टहलते हुए किसी विज्ञान के पर्चे की रूपरेखा का जन्म, मंत्रालय के कार्य के बाद देर शाम को प्रयोगशाला में उनका आना, रहन-सहन और सहज संवाद आदि को याद करके उनके पूर्व छात्रों व सहकर्मियों ने अपने संस्मरण लिखे हैं।

कुछ के शब्दों में–प्रो. अजीतराम वर्मा बताते हैं कि भौतिक विज्ञान की जटिल अवधारणाओं और गणितीय फॉर्मूलों को सीधे समझाने के बजाय वे पहले सरल, आम जीवन के तर्कों द्वारा विज्ञान की अवधारणा को समझाते थे। साधारण गणित का प्रयोग करके मौटे तौर पर परिणाम निकालते थे। इससे विज्ञान की जटिल अवधारणा का पूरा खाका स्पष्ट हो जाता था। फिर वे इसे व्यवस्थित रूप में विस्तार से बताते थे। बीच-बीच में सामान्य जीवन का संबंध विज्ञान से जोड़कर उदाहरण देते थे।



राष्ट्रीय भौतिकी प्रयोगशाला, नई दिल्ली। नोबल पुरस्कार विजेता प्रो. कपिट्ज़ा दपंति, प्रो. अजीतराम वर्मा, प्रो. लक्ष्मण कोठारी एवं अन्य।



डॉ. करण सिंह, प्रो. वर्मा के साथ प्रयोग का आनंद लेते हुए।

प्रो. अजीत राम वर्मा याद करते हुए बताते हैं, "एक दिन मैं डॉ. कोठारी की कक्षा के बाहर से गुज़र रहा था कि देखता हूं, कुछ छात्र उठक-बैठक लगा रहे हैं। मैं आश्चर्य में पड़ गया। सोचने लगा, आज इन छात्रों ने ऐसी क्या गलती की है कि डॉ. कोठारी को इन्हें इतनी कड़ी सजा देनी पड़ी। कक्षा समाप्त होने पर मैं डॉ. कोठारी के कमरे में गया और उनसे इस अप्रत्याशित घटना का कारण पूछा। डॉ. कोठारी ने मुझे बताया कि वे तो एक प्रयोग कर रहे थे। जिसमें ऊष्मा के यांत्रिक तुल्यांक 'J' का परिमाण निकालना था। छात्रों का वजन तथा खड़े रहने व बैठने पर जमीन से नाभि की दूरी माप ली गई। उठक-बैठक करने पर पता चला कि छात्र अपना वजन कितनी ऊंचाई तक उठा रहा है। साधारण फॉर्मूले से पता चलता है कि छात्र कितना कार्य कर रहा है। कार्य करने से शरीर का तापमान बढ़ जाता है, इससे कितनी ऊर्जा पैदा हुई यह पता लगा लेते हैं और 'J' का मान निकाल सकते हैं। **मैं इस अति व्यावहारिक प्रयोग के द्वारा भौतिकी के सिद्धांत को समझाने के डॉक्टर साहब के अनोखे तरीके को जानकर नतमस्तक हो गया।**

प्रो. लक्ष्मण कोठारी जो 1948 में एम.एससी. भौतिकी के छात्र थे, बताते हैं, "उन दिनों हमसे कई बार बड़े सामान्य से प्रश्न पूछे जाते थे, जैसे– कुर्सी-टेबल के चार पाए क्यों हैं, जबकि प्रयोगशाला के स्टूल के तीन पाए ही हैं? प्रश्नों के उत्तर ढूंढ़ने के लिए

छात्र आपस में चर्चाएं करते, विज्ञान की पत्रिकाओं में से शोध लेखों को पढ़ते और फिर कक्षा में उपस्थित होते थे। **डॉ. कोठारी व अन्य शिक्षक उन दिनों एम.एससी. के विद्यार्थियों को प्रोसीडिंगूस ऑफ रॉयल सोसाइटी, फिज़िकल रिव्यू, रिव्यूज़ ऑफ मॉडर्न फिज़िक्स जैसी विश्व प्रतिष्ठित पत्रिकाएं पढ़ने को प्रेरित करते थे।** आज के एम.एससी. के विद्यार्थी इन पत्रिकाओं से पूरी तरह अनभिज्ञ रह जाते हैं और विज्ञान से विमुख हो जाते हैं।''

सरकार में उच्च पदस्थ होने पर भी डॉ. कोठारी का रहन-सहन छात्रों को हमेशा उनके निकट बनाए रखता था। श्री वी. पी. साहनी याद कर लिखते हैं, **''लेक्चर में जब वे विज्ञान के रहस्यों पर से परत दर परत पर्दा उठाते तो जादू-सा प्रभाव होता। मैंने सुना था कि पंडित नेहरू ने एक बार यह इच्छा जाहिर की थी, कि काश! यदि डॉ. कोठारी उनके शिक्षक होते तो उन्हें दुनिया कहीं बेहतर समझ में आती।''** वे बार-बार मुख्य बातों को दोहराते और विज्ञान के इतिहास से कहानियां-किस्से सुनाकर सबका मन जीत लेते थे। विज्ञान के विकास का इतिहास उतना ही दिलचस्प है, जितना मानव का इतिहास। प्रयोग करने व करवाने में विद्यार्थियों से गहरा जुड़ाव हो जाता था। वे अकसर किसी उपकरण के साथ कक्षा में उपस्थित होते। विचित्र प्रयोग छात्रों को विस्मित कर देते।''

प्रो. के. एल. चौपड़ा लिखते हैं, ''डॉ. कोठारी के हवा में लहराते हुए जादुई हाथ और मजाक से भरे व्याख्यानों को सुनकर छात्र आनंदित हो जाते। एक बार मैंने फोटोन के संवेग पर प्रश्न पूछा। तुरंत ही उन्होंने मुझे एक पर्चा लिखने को प्रेरित किया।'' एक दिन डॉ. कोठारी **प्रो. डिराक** को लेकर भौतिक विभाग पहुंचे। छात्रों द्वारा नोबल पुरस्कार प्राप्त वैज्ञानिक, जिसकी क्वांटम मैकेनिक्स की किताब वे रोज पढ़ते आ रहे थे, अपने बीच देखकर घोर आश्चर्य हुआ। छात्रों के साथ प्रो. डिराक का संवाद **''शब्दों से परे का अनुभव''** था। इसी तरह **प्रो. ब्लैकेट, प्रो. ब्राउन, प्रो. टाउनसेन्ड, प्रो. नील्स बोहर, प्रो. एस.एन. बोस, प्रो. साहा, प्रो. रामन, प्रो. अबुस सलाम, प्रो. कपिट्जा, प्रो. चंद्रशेखर, प्रो. प्रिगोजिन** और न जाने कितने विश्व प्रसिद्ध वैज्ञानिकों का छात्रों से संवाद हुआ। ये सभी डॉ. कोठारी के अंतरंग मित्र थे। अधिकांश वैज्ञानिकों को विश्वविद्यालय के गेस्ट हाउस में ठहराया जाता था और भोजन आदि की व्यवस्था स्नातकोत्तर छात्रों के हॉस्टल 'ग्वायर हॉल' में की जाती थी। डॉ. कोठारी का यह मानना था कि हमें जनता के पैसों को संभल कर खर्च करना चाहिए। यह बात उन्होंने जीवन भर स्वयं पर तो लागू की ही, साथ ही जहां भी उन्होंने कार्य किया, इस नियम का पालन करवाया।

प्रो. यशपाल याद करते हैं, ''जापान में आणविक विस्फोट के बाद डॉ. कोठारी

पंजाब विश्वविद्यालय, लाहौर आए थे। डॉ. कोठारी ने नाभिकीय भौतिकी पर अपना व्याख्यान दिया था और मैं सोचता हूं कि पहली बार मेरा ऐसे व्यक्ति से सामना हुआ था, जिसने सच्चे अर्थों में चीजों को समझा था और उसे दूसरों को समझाने की उनमें गहरी ललक थी। मैं उनके पढ़ाने के तरीके से अभिभूत हो गया था।''

प्रो. यशपाल आगे लिखते हैं, ''देश का विभाजन हुआ। हम शरणार्थियों को किंग्जवे कैंप में ठहराया गया था। आगे पढ़ने की उम्मीद धूमिल होती जा रही थी। तभी हमारे कुछ शिक्षकों व छात्रों ने डॉ. कोठारी से मिलने की सोची। हम उनसे मिलने पहुंच गए और हमने अपने ठहरने, कक्षाओं की व्यवस्था व दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रयोगशालाओं में कार्य करने की अनुमति मांगी। डॉ. कोठारी और उनके सहयोगियों ने तुरंत हामी भर दी। और बस हम चले आए। यह बात आश्चर्य में डाल देती है कि कैसे बिना प्रशासन की अनुमति के डॉ. कोठारी व अन्य शिक्षकों ने मिलकर इतना बड़ा निर्णय लिया। प्रशासनिक कार्यवाही बाद में पूरी की गई। कभी हम अपने शिक्षकों की कक्षाओं में जाते तो कभी दिल्ली विश्वविद्यालय के शिक्षकों की। हमारी इस स्वतंत्रता पर कभी विवाद खड़ा नहीं हुआ।

दादाजी के जीवन में ऐसे अनेक अवसर आए, जब निर्णय पहले लिए गए और प्रशासनिक कार्यवाही बाद में की गई। जिसका चरित्र ही पाक हो, वहां विवाद और अविश्वास की कोई गुंजाइश नहीं रहती।

डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी ने युनेस्को फेडरेशन पुरस्कार समारोह में कहा **''विद्यार्थियों की पीढ़ियां डॉ. कोठारी के प्रति चिरकाल तक कृतज्ञ रहेंगी, जिन्होंने विज्ञान के रहस्यों व वैज्ञानिक अनुसंधान के मानवीय तरीकों से अपने विद्यार्थियों को संस्कारित किया और विज्ञान शिक्षा को इस दिशा में प्रेरित किया।''**



कल से काम शुरू कर दीजिए

'1951 की एक दोपहर मैं उनके सामने बैठा था। वे मेरे जीवन के सबसे घबराहट भरे क्षण थे। मैंने उत्सुकता में बिना रुके एक लंबा भाषण 'कोलोइड्स व लंबी कड़ी के अणुओं, रामन प्रभाव आदि पर दे डाला। जब मैंने समाप्त कर लंबी सांस भरी तो उनके चेहरे पर प्रशंसा व पितृत्व के भाव उभर आए। मैं अवाक् प्रतिक्रिया का इंतजार कर रहा था, कि तभी वे बोले, "कल से काम शुरू कर दीजिए।" अगले दिन जब मैं भौतिक विज्ञान के कार्यालय पहुंचा तो मुझे बताया गया कि मेरे अनुसंधान के लिए तीन लाख रूपये की राशि स्वीकृत की गई है। इसमें नये उपकरण व अन्य साजो-सामान खरीदने का प्रावधान था।

"आधुनिक विज्ञान के अजेय किले में मैंने अपनी मंजिल पा ली थी। एक वैज्ञानिक ने मुझे अपने सौहार्द्रपूर्ण संरक्षण में ले लिया था। मेरे लिए वैज्ञानिक अनुसंधान के क्षेत्र में जीवन भर के लिए उचित स्थान सुनिश्चित हो चुका था।"

डॉ. पी. के. कट्टी ने डॉ. कोठारी के साथ अपनी पहली मुलाकात को याद कर यह लिखा है। डॉ. कट्टी तब पूना से दिल्ली विश्वविद्यालय में शोध करना चाहते थे। दिल्ली विश्वविद्यालय का भौतिक विभाग तब देश-विदेश में अपना अहम् स्थान बना रहा था। डॉ. कोठारी रक्षा मंत्रालय में वैज्ञानिक सलाहकार बन चुके थे। एक नवयुवक के लिए पूना से दिल्ली आना मुश्किल था। तभी किसी ने श्री कट्टी को सलाह दी कि दिल्ली में डॉ. कोठारी से मिलो। वे छात्रों के लिए सहज उपलब्ध रहते हैं। यह बात उस समय श्री कट्टी को अटपटी लगी थी, क्योंकि तब डॉ. कोठारी स्वतंत्र भारत के जाने-माने वैज्ञानिक, विचारक व दृष्टा थे और देश के लिए विज्ञान के क्षेत्र में नई योजनाओं व कार्यक्रमों की नींव रख रहे थे। ऐसे व्यस्त व्यक्ति के लिए एक विद्यार्थी को उसके कैरियर की सलाह देने का समय कहां से होगा? लेकिन पहली मुलाकात जीवनदायिनी बन गई।

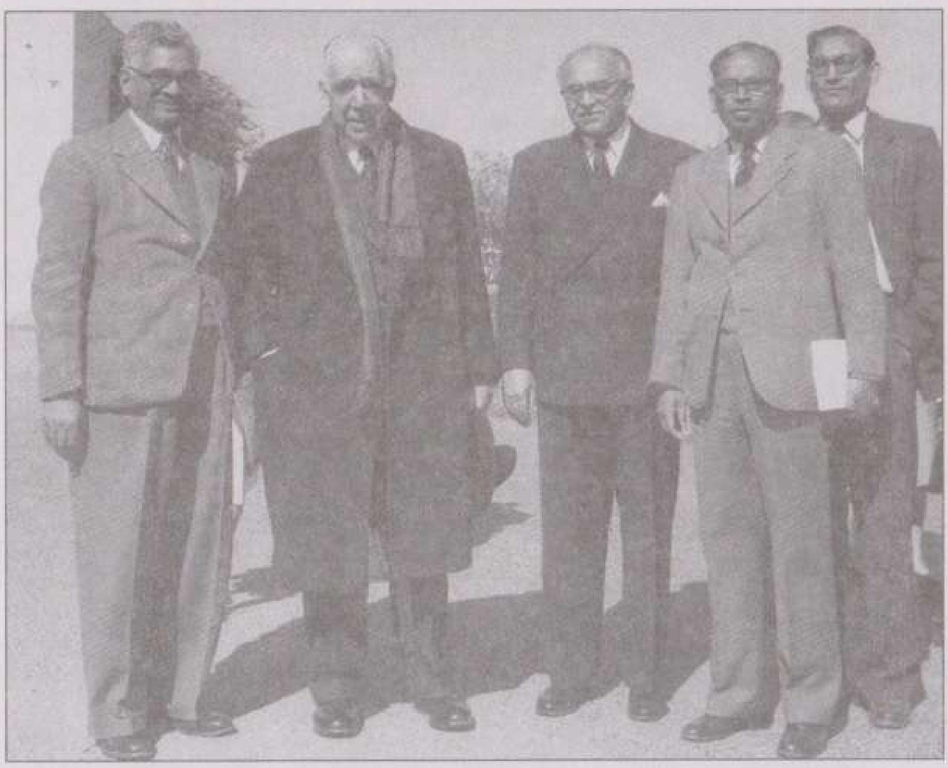
अपनी व्यवस्थित जिंदगी और करुणामय स्वभाव के कारण दादाजी के पास सबके लिए समय था। उनके सहकर्मी, छात्र, मित्र व अन्य उन्हें याद कर यही कहते हैं कि वे सहज थे, सरल थे, मृदुभाषी और विनम्र थे। और विज्ञान उनके जीवन की इस राह में एक सशक्त कर्म क्षेत्र बनकर उभरा।



शोध कार्य

बी.एससी. परीक्षा के बाद डॉ. कोठारी का पहला वैज्ञानिक पर्चा 1928 में भारतीय जरनल में छपा। यह कार्य 'भारतीय रबर के इलास्टिक व्यवहार' पर था। दूसरा पर्चा e/m अर्थात् आवेश बटा द्रव्यमान के परिमाण को तीन इलेक्ट्रोड वाल्व की मदद से मापने की विधि पर आधारित था। उनके गुरु प्रो. मेघनाद साहा ने लिखा, **"e/m के मापने की यह विधि अब देश की सभी प्रयोगशालाओं में अपनाई जा रही है। विदेश की प्रयोगशालाओं में इसके उपयोग की मुझे जानकारी नहीं है।"**

अपने कैम्ब्रिज प्रवास के दौरान उन्होंने **"दबाव द्वारा आयनीकरण का सिद्धांत" प्रतिपादित किया, जिसका व्यापक उपयोग होता है।"** श्वेत बौने तारों से लेकर ग्रहों की



प्रो. एफ.सी. ओलक, प्रो. नील्स बोहर (नोबल पुरस्कार विजेता) एवं अन्य के साथ।

आंतरिक क्रिया को समझने के लिए यह सिद्धांत एक विलक्षण खोज थी। उस समय के कई महान वैज्ञानिकों ने एक भारतीय नवयुवक के इस कार्य की प्रशंसा की। सर एडिंग्टन, प्रो. समरफील्ड, डॉ. जॉनसन आदि ने वैज्ञानिक पत्रिकाओं में इस कार्य के महत्त्व तथा विज्ञान की अन्य शाखाओं में इसके व्यापक प्रयोग के बारे में लिखा था।

पीएच.डी. की उपाधि देते हुए नाभिकीय भौतिकी के जनक लॉर्ड रदरफोर्ड ने 30 मार्च 1933 को यह लिखा "क्लेयर कॉलेज का मिस्टर डी. एस. कोठारी, मेरे सामान्य निर्देशन में पिछले तीन वर्षों से केवेंडिश प्रयोगशाला का शोध छात्र है। पहले वर्ष इसने पदार्थ के चुम्बकीय गुणों पर कुछ अन्वेषण आरंभ किए थे, मगर बाद के वर्षों में उसका कार्य सैद्धांतिक था, जिसकी गणनाएं तारों की रचना से संबंधित थीं। इस विषय पर उसने कुछ अति उत्तम स्तर के शोधपत्र प्रकाशित किए हैं।

मैं मानता हूं कि मिस्टर कोठारी को भौतिक विज्ञान का अच्छा ज्ञान है तथा उसमें मौलिक चिंतन की वह क्षमता है, जो कि भौतिकी की गणितीय समस्याओं के सफल हल के लिए आवश्यक है। थिसिस जो कि उसने पीएच.डी. हेतु प्रस्तुत की थी, विषयवस्तु और प्रस्तुति के तौर पर प्रशंसनीय रही। वह यह प्रकट करती है कि विषय की समझ और पहुंच के प्रति उसकी कितनी क्षमता है। **मुझे विश्वास है कि मिस्टर कोठारी भविष्य में एक सफल भौतिकविद् सिद्ध होगा और मौलिक तथा महत्त्व का शोध कार्य करेगा।**

"यहां आए विद्यार्थियों में से बहुत कम ऐसे हैं, जिन्होंने इतने कम समय में ऐसा उत्कृष्ट कार्य किया है।"

मूलभूत विज्ञान के अलावा डॉ. कोठारी के अनुसंधान के विषय व्यापक रहे हैं, जिनमें उनके व्यक्तित्व के मानवीय पक्ष का पता चलता है। गर्मी के मौसम में उत्तर



प्रो. प्योत्र कपिट्ज़ा के साथ घर के बगीचे में।

भारत में भीषण गर्मी पड़ती है। डॉ. कोठारी ने गर्मी से निजात पाने के लिए रक्षा विज्ञान प्रयोगशाला, दिल्ली में **डेज़र्ट कूलर के डिज़ाइन पर शोध शुरू करवाया।** मॉडल के लिए कुछ शर्तें रखी गई कि उसे आसानी से चलाया जा सके, रखरखाव आसान हो, कीमत कम हो तथा हर प्रकार के खतरे से मुक्त हो। चार वर्ष के प्रयोगों के बाद 1961 में रक्षा मंत्रालय द्वारा इसे पेटेंट करवाया गया। कई शहरों में इसके प्रदर्शन किए गए और फिर इसका व्यापक सार्वजनिक उपयोग शुरू हुआ। तब से अब तक डेज़र्ट कूलर के डिज़ाइन में कोई बड़ी तबदीली नहीं हो पाई है।

इसी तरह एक दिन सुबह डॉ. कोठारी ने रक्षा प्रयोगशाला के अहाते में सफाई कर्मचारियों को झुक कर झाड़ू लगाते हुए देखा। उन्होंने तुरंत ही झाड़ू के डिज़ाइन पर कार्य करने के लिए वैज्ञानिकों को प्रेरित किया। लंबे डंडे के कई डिज़ाइन तैयार किए गए और एक के चयन के बाद उसका व्यापक उपयोग किया गया। इन दोनों पर वैज्ञानिक शोधपत्र लिखे गए हैं। डॉ. कोठारी का मानना था कि **बड़ी चीजों व प्रश्नों के साथ छोटी लेकिन दैनिक जीवन की जरूरत की चीजों पर भी शोध होना चाहिए। उदाहरण के लिए वे कहते थे कि आलू छीलने के लिए चाकू के नये डिजाइन पर शोध होना चाहिए।**

आधुनिक विज्ञान और भारतीय आध्यात्म को उन्होंने एक-दूसरे के पूरक के रूप में प्रस्तुत किया। इस विषय को केंद्र में रखकर उन्होंने कई व्याख्यान दिए। 50 विश्वविद्यालयों में दीक्षांत भाषण दिए, जो शिक्षा के समग्र वाङ्मय पर आधारित थे। देश-विदेश की कई पत्र-पत्रिकाओं में भौतिकी, विज्ञान, रक्षा, शिक्षा व भारतीय दर्शन को समेटे उनके लगभग 160 लेख छपे; लेकिन जिस लेख ने उनके चिंतन-मनन को सबसे बेहतरीन ढंग से उजागर किया, वह था—उनका अपने गुरु प्रो. मेघनाद साहा को समर्पित **'एटम एंड सेल्फ" मेघनाद साहा मेडल लेक्चर'**। इसे उन्होंने 5 अक्टूबर 1978 को भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी, नई दिल्ली में दिया था। बाद में एक पुस्तिका के रूप में भारतीय विद्याभवन, बंबई ने भी इसे प्रकाशित किया। दुनिया के कई वैज्ञानिकों पर इस लेख का गहरा प्रभाव पड़ा। वे यह जानकर चमत्कृत रह गए कि आधुनिक (भौतिक) विज्ञान की नई अवधारणाएं कैसे भारतीय अध्यात्म की अवधारणाओं की ओर बढ़ रही हैं।

यह डॉ. कोठारी के विज्ञान और भारतीय दर्शन में गहरे और व्यापक चिंतन का ही परिणाम था कि वे **"आध्यात्मिक वैज्ञानिक"** कहलाए।

'Atom and Self', Education, Science and Human Values, Eds., R. C. Mehrotra and Ramesh Arora, Published by Wiley Eastern Limited, 4835/24,Ansari Road, Daryaganj, New Delhi-110002

Proc. Indian natn. Sci. Acad.. Part A, Phys. Sci., 46, No. 1, 1980, pp. 1–28

MEGHNAD SAHA MEDAL LECTURE–1978

ATOM AND SELF

D. S. KOTHARI, F. N. A.

(*Delivered on 5 October 1979*)

THE name of Meghnad Saha will always remain associated with the theory of thermal ionization. If a theory is to be judged by the simplicity of its concepts and the fertility of its applications, then Saha's contribution would count as one of the greatest of the present century.

I. LIFE OF SAHA

Saha was born on 6th October, 1893 in Seoratali village in the district of Dacca (now in Bangladesh). He died on 16th February 1956. Saha came from a family with very neagre means. His early education was beset with great hardships. In 1905, the rear of great political unrest in Bengal, Saha was involved in a boycott of the visit of he British Governor to his school. He had to leave the school and forfeit the Government scholarship awarded to him for standing first at the middle school examination. He joined a private school, and passed the Entrance Examination of the Calcutta Jniversity in 1909, standing first amongst the East Bengal candidates. Saha was a precocious student. He joined the Calcutta Presidency College in 1911. Here his eachers were Acharya P. C. Ray, J. C. Bose, D. N. Mallik and C. E. Cullis. Both in he B.Sc. (1913) and the M.Sc. (1915) in Applied Mathematics examinations, Saha ad the second place, the first position going to S. N. Bose. He thought of competing or the Indian Finance Service, the only All India service open to an Indian at the ime, but was refused permission by the Government. To support himself and his ounger brother, Saha took to private tuitions covering long distances on a bicycle. In 916, he was appointed Lecturer in the Mathematics Department of the newly founded Iniversity College of Science (Calcutta) for postgraduate education and research. A ear later, both he and S. N. Bose were transferred from the Mathematics Department the Department of Physics. The following year, C. V. Raman, leaving the Indian inance Service, joined as the Palit Professor of Physics. Several of the postgraduate ourses Saha had to teach were entirely new to him. He had studied physics upto the .Sc. only. Saha found thermodynamics and spectroscopy especially stimulating. ortunately—as he often used to recall in later life—about this time, he came across iss Agnes Clarke's two excellent popular books on the sun and the stars. These books scinated him greatly and gave him some idea of the main problems in astrophysics. e was familiar with Planck's book on *Thermodynamics*, and papers of Böhr and of mmerfeld on the quantum theory of the atom. This prepared the way for his ochal work (cf. Kothari, 1960).

मेघनाद साहा मेडल लेक्चर 1978, 'एटम एंड सेल्फ'।



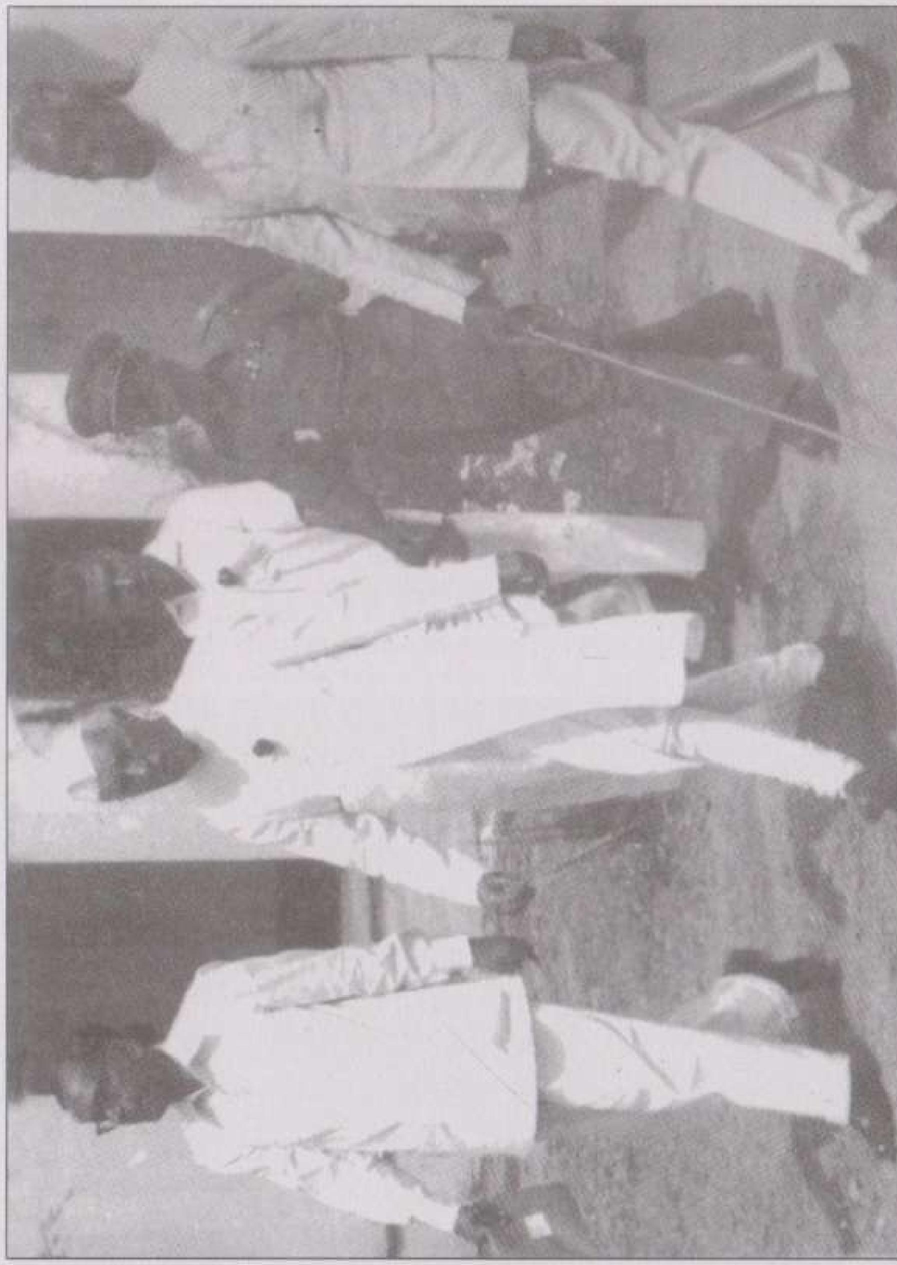
देश में रक्षा विज्ञान का प्रारंभ

1947 में नोबल पुरस्कार विजेता प्रो. पी.एम.एस ब्लैकेट विज्ञान एसोसिएशन के अधिवेशन में भाग लेने भारत आए। प्रथम विश्व युद्ध के दौरान प्रो. ब्लैकेट, ब्रिटेन की वायुसेना में रक्षा सलाहकार के रूप में कार्य कर चुके थे। अब वे मेनचेस्टर विश्वविद्यालय में भौतिकी के प्रोफेसर थे। इन्होंने भी डॉ. कोठारी की तरह लॉर्ड रदरफोर्ड के साथ केवेंडिश प्रयोगशाला, कैम्ब्रिज से पीएच.डी की उपाधि प्राप्त की थी। अपनी भारत यात्रा के दौरान उन्होंने पं. नेहरू से मुलाकात की और उन्हें भारत में रक्षा विज्ञान प्रतिष्ठान स्थापित करने की सलाह दी।

भारत की स्वतंत्रता के बाद देश की विशाल समस्याओं से निपटने के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी का व्यापक उपयोग शुरू हुआ। प्रधानमंत्री पंडित नेहरू के कुशल नेतृत्व में आणविक ऊर्जा का कार्य डॉ. होमी जहांगीर भाभा, विज्ञान और



प्रो. पी.एम.एस. ब्लैकेट के साथ।



साथ बढ़ते कदम—श्री कृष्णा मेनन, पं. नेहरू के साथ डॉ. कोठारी रक्षा विज्ञान सम्मेलन के उद्घाटन अवसर पर।



वैज्ञानिक सलाहकार को सुनते हुए रक्षामंत्री श्री कृष्णा मेनन, तीनों सेना अध्यक्ष, वैज्ञानिक एवं अन्य सेना अधिकारी।

औद्योगिक अनुसंधान का कार्य डॉ. शांति स्वरूप भटनागर तथा रक्षा विज्ञान और अनुसंधान का कार्य डॉ. कोठारी को सौंपा गया। 12 जून 1948 को डॉ. कोठारी रक्षा मंत्री के वैज्ञानिक सलाहकार नियुक्त हुए। और यहीं से देश में रक्षा विज्ञान के नए अध्याय की शुरुआत हुई। इस दिशा में तेजी से कार्य हुआ जिसका प्रमुख कारण था— **पं. नेहरू, प्रो. ब्लैकेट, श्री कृष्णा मेनन तथा डॉ. कोठारी के बीच कमाल का आपसी तालमेल। इस कार्य के लिए प्रो. ब्लैकेट तीन-चार बार भारत आए थे।**

जून 1949 में भारत सरकार ने रक्षा विज्ञान संगठन स्थापित किया। डॉ. कोठारी के नेतृत्व में 40 सीनियर वैज्ञानिकों, 100 जूनियर वैज्ञानिकों तथा 25 वैज्ञानिक सहायकों की नियुक्ति की गई। आज यह अपने नवीन व विस्तारित स्वरूप में रक्षा अनुसंधान एवं विकास संस्थान (डी.आर.डी.ओ) के नाम से जाना जाता है। संस्थान की लगभग 50 प्रयोगशालाओं में 25000 से अधिक वैज्ञानिक कार्य कर रहे हैं और देश के रक्षा मामलों में महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।



तनख्वाह मात्र 1 रु.

कई लोग कहते हैं कि जिस तरह का सादगीपूर्ण और अहिंसक जीवन कोठारी साहब ने जीया, वह आज के जमाने में संभव नहीं है; लेकिन वे लोग यह कह कर स्वयं का छद्म बचाव ही कर सकते हैं। मानव सभ्यता के लंबे दौर में इंसानों को लगातार संघर्षों से गुजरना पड़ा है। हर घड़ी एक परीक्षा की घड़ी रही है। वे ही महान बन सके, जो परिस्थितियों से ऊपर उठ सके। जिन्होंने थोड़े के लिए जीवन के बड़े लक्ष्य के साथ छलावा नहीं किया।

1948 में दादाजी को वैज्ञानिक सलाहकार बनने का आमंत्रण मिला। उन्होंने यह पद स्वीकारते हुए तीन शर्तों का आग्रह किया, जिन्हें सहज मान लिया गया।

1. इस नये पद पर कार्य करते हुए उन्हें दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रयोगशाला एवं शोधकार्यों के साथ निकट संबंध बनाये रखने दिया जाए। उन्हें विश्वास था कि यदि कुछ महीनों के लिए भी वैज्ञानिक अपने कार्य को छोड़ देते हैं, तो वे अपने विषय की वर्तमान स्थिति से पीछे छूट जाते हैं। अतः विश्वविद्यालय से संबंध जरूरी है।
2. वे वही तनख्वाह लेते रहेंगे, जो उन्हें एक प्रोफेसर के नाते मिल रही है; इससे अधिक नहीं।
3. सरकार उन्हें घर से कार्य हेतु आने-जाने के लिए वाहन उपलब्ध करवाए।

उनकी तनख्वाह वाली शर्त कुछ विचित्र है। जिस पद पर उन्हें आसीन किया गया था, उस पद की तनख्वाह 2000-2500 रु. थी, जबकि विश्वविद्यालय के प्रोफेसर की तनख्वाह 1000-50-1250 रु. थी। प्रोफेसर की तनख्वाह (1150/-) वाली शर्त स्वीकारने के पश्चात् सरकार ने दादाजी से अनुरोध किया कि वे अतिरिक्त धन राशि अपनी पसंद के किसी व्यक्ति या संस्था को दे देवें। इस पर दादाजी का कहना था, **''यह हमारी अपनी सरकार है और इसके सही उपयोग का उसे बेहतर ज्ञान होगा। अतः वह (सरकार) ही निर्णय लेवे।''**

1952 में उन्होंने पुनः डीन, दिल्ली विश्वविद्यालय का पद ग्रहण कर लिया, लेकिन

सरकार ने उन्हें रक्षा सलाहकार का दायित्व भी निभाते रहने को कहा था, जिसे वे 1961 तक रक्षामंत्री के विशेष आग्रह पर करते रहे। परंतु समस्या यह थी कि यदि आप वित्तींय शक्तियों का निष्पादन करते हैं, तो आपको सरकारी खजाने से तनख्वाह भी लेनी होती है। **दादाजी ने मात्र एक रुपया लेकर इसका वहन किया।**



रक्षा विज्ञान में नवाचार

आजादी के बाद देश में रक्षा विज्ञान का कोई पूर्व आधार नहीं था। इसलिए डॉ. कोठारी ने विश्वविद्यालयों तथा अन्य शोध संस्थानों से वैज्ञानिकों का स्वयं चयन कर उन्हें रक्षा विज्ञान के नये क्षेत्रों में कार्य करने को प्रोत्साहित किया। इसके लिए कई वैज्ञानिक सम्मेलनों का आयोजन किया गया। डॉ. कोठारी की दूरदृष्टि थी कि उन्होंने रक्षा विज्ञान के उन शोध क्षेत्रों का चयन किया, जो भारत की भौगोलिक स्थिति के मद्देनजर महत्त्वपूर्ण थे। ये थे : **ऑपरेशनल रिसर्च, बैलिस्टिक्स, एक्सप्लोसिव्स तथा आरमामेन्ट्स, रॉकेट एवं मिसाइल, इलेक्ट्रॉनिक्स, नेवल तकनीकी, इंजीनियरिंग, खाद्य पदार्थ एवं जीव विज्ञान जिसमें चिकित्सा, फिजियोलोजी तथा मनोविज्ञान शामिल थे।** ये सभी शाखाएं रक्षा विज्ञान संगठन, दिल्ली से प्रारंभ होकर कालांतर में स्वतंत्र प्रतिष्ठानों में तब्दील हो गई। उनका विश्वास था, **"विनम्र शुरुआत और स्वाभाविक विकास।"** उनके 13 वर्ष के कार्यकाल में देश के विभिन्न स्थानों पर 12 रक्षा विज्ञान प्रयोगशालाएं स्थापित की गईं। इन प्रयोगशालाओं में एक थी, **"न्यूक्लीयर मेडीसिन एंड अलाइड सांइसेस"** जो शायद विश्व में इस तरह की पहली प्रयोगशाला थी। दिल्ली विश्वविद्यालय के सहयोग से यहां विकिरण चिकित्सा विज्ञान (रेडिएशन मेडीसिन) पर डिप्लोमा पाठ्यक्रम शुरू किया गया।

रक्षा सलाहकार का पद संभालते ही 20 अप्रैल 1949 को उन्होंने रक्षा विज्ञान सम्मेलन का आयोजन किया। इसमें सेना के तीनो अंगों के अधिकारियों को भी आमंतित्र किया गया। साथ ही आमंत्रित थे, देश के विश्वविद्यालयों के वैज्ञानिक। यह एक नये युग की शुरुआत थी, जिसमें देश के वैज्ञानिकों का सीधा संपर्क सेना की समस्याओं से हो रहा था।

द्वितीय विश्व युद्ध में अणु बम गिराए जाने के तुरंत बाद डॉ. कोठारी ने "नाभिकीय विस्फोट" विषय पर दो व्याख्यान दिए। एक व्याख्यान आम जनता के लिए तथा दूसरा सेना के लिए। प्रधानमंत्री नेहरूजी ने इसे काफी सराहा और डॉ. कोठारी व डॉ. होमी जहांगीर भाभा को इस विषय पर विस्तार से लिखने को कहा।

डॉ. कोठारी ने अकेले ही यह जिम्मेदारी निभाते हुए दो वर्ष के अल्पकाल में इसे



युद्ध नहीं लेकिन सुरक्षा—भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद, रक्षामंत्री कृष्णा मेनन डॉ. कोठारी को ध्यानपूर्वक सुनते हुए।

पूरा किया। 1956 में भारत सरकार द्वारा पुस्तक के रूप में इस कार्य का प्रकाशन हुआ। शीर्षक था, **"न्यूक्लियर एक्सप्लोजन एंड देयर इफैक्ट्स।"** आणविक बम विस्फोट के वैज्ञानिक पक्ष एवं जीवन पर इसके प्रभाव पर यह पुस्तक तब लिखी गई थी, जब इस विषय पर सारी सैन्य सूचनाएं गोपनीय रखी गई थीं। यह डॉ. कोठारी की

कुशाग्र बुद्धि, तार्किक क्षमता व गहरी समझ का परिणाम था कि उन्होंने इस पुस्तक के माध्यम से परमाणु अस्त्र के संपूर्ण प्रभावों का इतना व्यापक व बेहतरीन दस्तावेज प्रस्तुत किया। इस किताब के रूसी, जापानी व जर्मन में अनुवाद हुए तथा विश्वभर में इसे खूब सराहा गया।

जर्मन अनुवाद के प्राक्कथन में लिखा है, भारतीय पुस्तक **"परमाणु विस्फोट और उसका प्रभाव"** के (जर्मन) प्रकाशन के साथ ही इतिहास बनाने वाला कार्य प्रकाश में आया है। **"इतिहास बनाने वाली पुस्तकें वे होती हैं, जो उपयुक्त समय पर प्रामाणिक रूप से निरासक्त एवं निर्णायक सूचनाएं देती हैं। जो विवादों और विकृत विचारों से परे होती हैं और अपने में सर्वांगीण दृष्टि लिए हुए होती हैं। ऐसी पुस्तक न केवल आमजन वरन् राजनेताओं के लिए भी विचारोत्तेजक होती हैं और उन्हें उस दिशा में कार्य करने को प्रेरित करती हैं। ऐसी ही एक भारतीय पुस्तक का जर्मन अनुवाद आपके सामने प्रस्तुत है।"**

डॉ. नागरत्नम जो स्वयं रक्षा वैज्ञानिक थे, ने 'प्रथम डॉ. डी. एस. कोठारी स्मृति व्याख्यान (1993)' में कहा, **"देश प्रो. कोठारी के प्रति गहरी कृतज्ञता प्रकट करता है, जिन्होंने देश में रक्षा विज्ञान के स्वस्थ विकास एवं उन्नति की नींव रखी।"** डॉ. कोठारी ने जीवन भर अहिंसा की उपासना की, साथ में रक्षा विज्ञान जैसे क्षेत्र में कार्य किया। यहां भी उनका कार्य व्यापक अनुसंधान पर केंद्रित था, जिसमें अन्य सैन्य विषयों के अलावा सैनिकों की आत्मरक्षा के उपकरण, उनके स्वास्थ्य, भोजन, मनोवैज्ञानिक प्रभाव तथा विषम पारिस्थितिक हालातों की समस्याओं आदि विषयों पर शोध कार्य को मुख्यता से लिया गया।

अपनी पुस्तक का अंत डॉ. कोठारी ने इस तरह किया **"...भविष्य में विश्व एवं देश की सुरक्षा की राह जो भी हो, उस राह पर परमाणु अस्त्रों के विकास व प्रसार को निश्चित रूप से स्थान नहीं मिलेगा।"** यह भावना एक भारतीय आध्यात्मिक वैज्ञानिक की ही हो सकती है।

डॉ. नागरत्नम के शब्दों में **'इसीलिए डॉ. कोठारी भारत में रक्षा विज्ञान के पिता कहलाए।'**



रक्षा प्रयोगशाला के उद्घाटन पर विवाह

पश्चिमी राजस्थान और गुजरात के कच्छ क्षेत्र की सीमाएं पाकिस्तान से लगी हैं। इसलिए सुरक्षा की दृष्टि से यह क्षेत्र महत्त्वपूर्ण है। राजस्थान के मरुस्थलीय इलाके में तापमान में बहुत अधिक परिवर्तन होते हैं। जवानों को गर्मियों में 48-50 डिग्री सेल्सियस तापमान व सर्दियों में शून्य डिग्री तापमान में रहना पड़ता है। धूल भरी आंधियों की वजह से रास्ते स्थाई तौर पर नहीं बने होते। पानी की कमी के साथ समूचे इलाके में पेड़-पौधों के अभाव के कारण वीरानी-सी रहती है। ऐसे में जवानों के शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ता है। साथ ही रक्षा उपकरणों व आयुधों में भी अनुकूल परिवर्तन की आवश्यकता होती है।

इस जरूरत को समझते हुए डॉ. कोठारी ने जोधपुर में रक्षा प्रयोगशाला स्थापित करने का निर्णय लिया। 15 मई 1959 की सुबह इस प्रयोगशाला का



रक्षा प्रयोगशाला, जोधपुर के उद्घाटन अवसर पर, 1959।

अपने पुत्र डॉ. ललित कोठारी के विवाह पर श्री कृष्णा मेनन के साथ।

विधिवत् उद्घाटन हुआ। रक्षामंत्री श्री वी. के. कृष्णा मेनन, तीनों सेनाओं के अध्यक्ष, राजस्थान के मुख्यमंत्री तथा सेना व सरकार के अधिकारी इस अवसर पर उपस्थित थे।

सौभाग्य से उसी दिन शाम को मेरे माता-पिता, प्रेमलता व डॉ. ललित कोठारी का विवाह हुआ। यह संयोग श्री कृष्णा मेनन की व्यक्तिगत चेष्टा से संभव हुआ। जोधपुर उन दिनों बहुत गर्म रहता है। श्री कृष्णा मेनन रूमाल में बर्फ बांध कर सिर को ठंडा करते और जोधपुरी जायकेदार व्यंजनों का स्वाद लेते हुए नजर आते थे। सभी महानुभावों ने शादी में शामिल होकर जोधपुरी मेहमाननवाजी का आनंद उठाया। परिवार के सदस्यों के लिए यह अवसर एक यादगार लम्हा बन गया। कुछ वर्षों बाद मेरा जन्म भी जोधपुर में ही हुआ।

Defence Science Laboratory Opened In Jodhpur

FROM OUR SPECIAL CORRESPONDENT

Hindustan Times JODHPUR, May 16.

A DEFENCE science laboratory for studying the performance of weapons and equipment under conditions of dry heat was opened here today by the Defence Minister, Mr Krishna Menon.

Mr Menon said the laboratory was not intended to be a storehouse of poison gas or other nefarious military equipment, but would be used for carrying out experiments on the behaviour of armaments under the natural conditions obtaining in this part of the country.

Jodhpur had been chosen as the site for this laboratory because of the sun and sand which Rajasthan could offer in plenty, he said.

Though this laboratory is only one in a chain of defence science laboratories being set up in different parts of the country, it is the first national laboratory to be set up in Rajasthan.

The laboratory, as explained by Dr. Kothari, Scientific Adviser to the Ministry, will be concerned, among other things, with the testing of weapons and equipment under conditions of dry heat and the effect on them of sand and dust-storms. Most of the defence equipments have to function under conditions of severe stress and strain imposed by climate factors. To ensure reliability, they have to be tested under natural conditions by actual users. Experiments in defence science laboratories will include testing under hot humid conditions, hot dry conditions, and under conditions of cold and high altitude.

Hitherto, the tropical specifications for defence equipment have been based on foreign standards, as no scientific study for their evaluation has been carried out in India.

Another scientific activity at this laboratory relates to the physiology of heat effects. This would entail investigation of human tolerance to heat, problems of clothing and footwear, and a study of various nutritions suitable for the hot weather.

A three-day defence science and production exhibition has also been organized on the occasion. The exhibition demonstrates how solid foundations are being laid towards reducing the country's dependence on foreign imports of defence stores and equipment by stepping up indigenous production.

The Chief Minister of Rajasthan announced that the Maharaja of Jodhpur has agreed to provide cows and stud bulls for the dairy which would be attached to the laboratory for the benefit of the defence personnel and the Air Force College.

25 मई 1959, रक्षा विज्ञान प्रयोगशाला, जोधपुर का आरंभ।



पहली रक्षा विज्ञान प्रदर्शनी

अप्रैल 1958 में जब रक्षा विज्ञान प्रयोगशाला, मेटकॉफ हाऊस, दिल्ली में स्थानांतरित हुई तो डॉ. कोठारी ने रक्षा उत्पादों की प्रदर्शनी का आयोजन किया। इसमें रक्षा विज्ञान की उपलब्धियों व उपकरणों को प्रदर्शित किया गया था। इस प्रदर्शनी का उद्घाटन रक्षा मंत्री श्री कृष्णा मेनन ने किया। देश के राष्ट्रीय नेताओं को भी औपचारिक तौर पर आमंत्रित किया गया था।

प्रधानमंत्री पं. नेहरू इसे देखने आए। फिर तीन दिन बाद राष्ट्रपति श्री राजेंद्र प्रसाद ने भी इसका अवलोकन किया। रक्षा विज्ञान में कार्यरत वैज्ञानिकों व तकनीशियनों का हौंसला बढ़ाने तथा इसके महत्त्व को समझते हुए देश के रक्षामंत्री, प्रधानमंत्री व राष्ट्रपति का वहां आना एक अद्वितीय उदाहरण है, राजनैतिक इच्छा शक्ति का। डॉ. कोठारी प्रतिवर्ष 'रक्षा विज्ञान सम्मेलन' का आयोजन करवाते थे। इसमें रक्षा विज्ञान के नए शोध एवं उपकरणों का प्रदर्शन भी किया जाता। इन सम्मेलनों में वैज्ञनिक एवं तीनों सेनाओं के अधिकारी शिरकत करते थे।

यदि यह परंपरा लगातार जारी रहती तो सेना की आवश्यकताओं का बेहतर ख्याल रखा जा सकता था और हमें अपने रक्षा बजट का इतना बड़ा हिस्सा विदेशी साजो सामान खरीदने में नहीं गवाना पड़ता। आरंभ में रखे गए लक्ष्य के अनुरूप ही देश में ही हमारी सुरक्षा की आवश्यकताओं के सस्ते एवं कारगर उपकरण बनते।



डॉ. कोठारी और पं. नेहरू रक्षा विज्ञान प्रदर्शनी के उद्घाटन अवसर पर।



विजयन्ता टैंक राजपथ पर

आज़ादी के बाद देश के कई वैज्ञानिकों ने मौलिक अनुसंधान की राह छोड़कर देश के नवनिर्माण में अपना जीवन लगा दिया। ये वो वैज्ञानिक थे, जिन्होंने विदेशों में उत्कृष्ट प्रतिभा का प्रदर्शन किया था। यदि वे विज्ञान की दिशा में कार्य करते रहते तो भारत के नाम कई नोबल पुरस्कार होते। व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षा के स्थान पर देशवासियों के उत्थान के लिए कार्य करने की इन वैज्ञानिकों की प्रेरणा अद्वितीय थी।

डॉ. कोठारी ने भी यही राह चुनी। प्रथम बार वे रक्षा सलाहकार के रूप में तथा फिर शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करने के लिए बुला लिए गए। यद्यपि इस दौरान भी उन्होंने शिक्षण व शोध का कार्य जारी रखा।

रक्षा विज्ञान के दिनों को याद कर डॉ. कट्टी ने लिखा है, "**डॉ. कोठारी ने अपना ध्यान विजयन्ता टैंक पर केंद्रित किया जो देश में बना पहला टैंक था।** इसके लिए रात्रि में देख सकने वाले प्रकाशकीय उपकरणों को विकसित करने की जरूरत थी। पाकिस्तान तब तक पैटन टैंक खरीद लिए थे, जो रात्रि में देख सकने वाले इनफ्रारेड उपकरण से लैस थे। भारत को शीघ्र ही कुछ करना था। दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रो. किचलू व डॉ. आत्माराम ने इस दिशा में प्रकाशकीय कांच का निर्माण कर उसकी क्षमता को दर्शाया था। डॉ. कोठारी ने एक माह तक अथक कार्य कर संपूर्ण कार्यप्रणाली तैयार कर ली। मुझ जैसे युवा वैज्ञानिक को यह चुनौती भरा कार्य सौंपते हुए आई.आई.टी जाने के निर्देश दिए।' इस तरह उन्होंने युवा वैज्ञानिकों का मार्गदर्शन किया और उन्हें देश के विकास में योगदान देने के लिए प्रेरित किया।"

डॉ. कोठारी ने युवा वैज्ञानिकों का आवाहन करके कहा था, "**डी.आर.डी.ओ के कार्यों का सच्चा मूल्यांकन उसके मंत्रियों, अधिकारियों द्वारा नहीं किया जाएगा बल्कि उन करोड़ों देशवासियों की तालियों की गड़गड़ाहट से किया जाएगा, जब आपके द्वारा विकसित रक्षा उपकरण गणतंत्र दिवस के अवसर राजपथ पर चलते हुए देश और राष्ट्रपति को सलामी देते हुए गुजरेंगे।**"

दिसंबर 1971 में रात्रि इनफ्रारेड उपकरण से लैस भारत के विजयन्ता टैंकों ने

नियंत्रण रेखा पर रात के अंधेरे में अपना कमाल दिखा दिया। रक्षा विज्ञान के अनुसंधान का यह बेमिसाल प्रदर्शन था।

श्रद्धा से अपने गुरु को याद कर डॉ. कट्टी लिखते हैं, **''अपने गुरु द्वारा बताए गए मार्ग पर मैं चलता रहूंगा। उनके बिना इस लंबी यात्रा में ब्रह्मांड के असीम विस्तार व काल में उम्मीद है, मेरी उनसे फिर मुलाकात होगी।''**



नेट लड़ाकू विमान

नेट एक छोटा लड़ाकू विमान था, जिसे नाटो देशों ने अस्वीकृत कर दिया था। उसका डिजाइन तब दूसरे विकासशील देशों में बिकने के लिए उपलब्ध था। नेहरूजी असमंजस में थे कि इसे भारत के लिए खरीदा जाए या नहीं। उन्होंने डॉ. कोठारी से सलाह चाही। डॉ. कोठारी ने रेखांकन व चित्रों आदि के जरिये यह सिद्ध करके दिखाया कि इस विमान में विशेष कलाबाजी की क्षमता है तथा छोटे आकार के कारण यह आसानी से दिखाई भी नहीं दे सकता। मच्छर का उदाहरण देते हुए उन्होंने बताया कि **मच्छर की भनभनाहट तो हम सुन सकते हैं, परंतु उसे ढूंढ कर उस पर निशाना साधना बड़ा मुश्किल होता है**। चर्चा के बाद नेहरूजी ने सस्ते और विशेष क्षमता वाले नेट विमानों की खरीद की स्वीकृति दे दी। यह विदित ही है कि इन विमानों ने भारत-पाक युद्ध में बड़ा सराहनीय कार्य किया था।



मुनरो जैट में खगोल विज्ञान

वैज्ञानिक कई बार अपने अनुसंधान से प्रेरणा पाकर जीवन की अन्य समस्याएं सुलझाते हैं। जैसे— अंतरिक्ष एजेंसी नासा के अविष्कारों का लाभ चिकित्सा के क्षेत्र में किसी नई उपलब्धि को मिलता है। डॉ. कोठारी ने भी अपने खगोल विज्ञान के शोध का इस्तेमाल सैन्य शस्त्र को बेहतर समझने में किया था।

द्वितीय विश्व युद्ध के समय रक्षा कवच को भेदने के लिए मुनरो जैट नामक अस्त्र बनाया गया था। इसमें बारूद के अग्र भाग के चारों ओर तांबे जैसी धातु की एक तिकोनी परत लगाई गई। जब बारूद को चिंगारी लगाई जाती तो यह धातु सामने और चारों ओर टूट कर मार करती थी तथा जैट को उच्च तापमान के साथ तेजी से आगे धकेलती थी। यह जैट रक्षा कवच को कई लाख वायुमंडलीय दबाव के साथ कई से. मी. की लंबाई तक भेद डालता था। इस तथ्य को बेहतर समझने तथा इसमें आगे कार्य करने के लिए डॉ. कोठारी ने अपने खगोल विज्ञान के शोध (प्रेशर आइनाइजेशन इन कन्डेन्स मैटर) के समीकरणों का सहारा लिया था।

दूसरा उदाहरण बम व गोलियों के फटने से संबंधित था। डॉ. कोठारी ने सांख्यिकीय समीकरणों का प्रयोग करते हुए यह बताया था कि जिस तरह तारों के संगठन में यादृच्छिक विखण्डन (रेन्डम फ्रेगमेन्टेशन) होता है, उसी तरह बम या गोली के फूटने में धारदार कीलों आदि के द्रव्यमान में विखण्डन होता है।

इस तरह विज्ञान के मूलभूत अनुसंधान को आधार बना कर रक्षा अनुसंधान की नींव रखी गई थी।



साइबेरिया और वोडका

रक्षा सलाहकार के नाते डॉ. कोठारी एक बार रक्षा मंत्री श्री कृष्णा मेनन तथा सेना के अधिकारियों के एक दल के साथ रूस के उत्तरी भाग साइबेरिया की यात्रा पर गए। कड़ाके की ठंड का मौसम था। विशेष कपड़े, ओवरकोट आदि बनवाए गए थे। जब सभी हवाई जहाज में सवार होकर बातें कर रहे थे, तभी श्री कृष्णा मेनन ने डॉ. कोठारी से पूछा, "डॉ. कोठारी, साइबेरिया की ठंड से बचने के लिए आपको वोडका (शराब) तो पीनी ही पड़ेगी वरना मारे जाओगे।" डॉ. कोठारी मुस्करा दिए और कहा, "आप चिंता न करें! मुझे जुकाम भी नहीं होगा।"

वहीं एक अन्य अवसर पर औपचारिक भोज में टोस्ट व मदिरा से स्वागत होना था। भारतीय दूतावास के अधिकारियों ने डॉ. कोठारी को सलाह दी कि वे इस भोज में न जाएं। डॉ. कोठारी ने कहा, "अपनी तो मैं संभाल लूंगा और विश्वास रखें बेहतर तौर पर।" और ऐसा हुआ भी। जैसे ही टोस्ट के साथ शराब का



गिलास उठाया गया डॉ. कोठारी ने मेज पर रखे जल से अपना गिलास भरा और उठा कर बोल पड़े, **''हमारी मित्रता के लिए जो कि एक्वा प्यूरा की तरह पवित्र और निर्मल है।''** इस सहज उद्घोषणा से सभी उल्लसित हो उठे और अभिनंदन समारोह यादगार बन गया।



सफाई कर्मचारी को साइकिल लोन

रक्षा विज्ञान प्रयोगशाला की शुरुआत दिल्ली के पुराने सचिवालय के पीछे स्थित मेटफॉक हाउस में हुई थी। दादाजी को एक सफाई कर्मचारी के बारे में काफी शिकायतें मिलनी शुरू हुई। वह काम में ध्यान ही नहीं देता था। ऑफिस परिसर के किसी कोने में सोता रहता था। एक दिन दादाजी ने उसे अपने कमरे में बुलवाया। शुरू में वह काफी अकड़ से पेश आया, लेकिन दादाजी के मृदु व करुणा भरे स्वभाव से प्रभावित होकर उसने अपनी समस्या सामने रखी। उसने बताया कि वह बहुत गरीब है और काफी दूर से पैदल चलकर जब ऑफिस पहुंचता है, तो थककर चूर हो जाता है। साथ ही उसने बताया कि अधिकारी तो सरकार से लोन पर मोटरगाड़ी खरीद लेते हैं, लेकिन उसके जैसे कर्मचारी को सरकार साइकिल लोन तक नहीं देती। दादाजी सुनकर चकित रह गए और तुरंत अपने लेखा अधिकारी को बुलवाकर उसे अपने खाते में से साइकिल लोन देने का आदेश दिया। दादाजी ने कर्मचारी को आश्वस्त करते हुए कहा कि वे यह बात मंत्रालय में रखेंगे। मंत्रालय ने दादाजी का प्रस्ताव मान लिया और वह कर्मचारी संस्था का एक मेहनती कर्मचारी साबित हुआ।



यात्रा-भत्ते का प्रलोभन

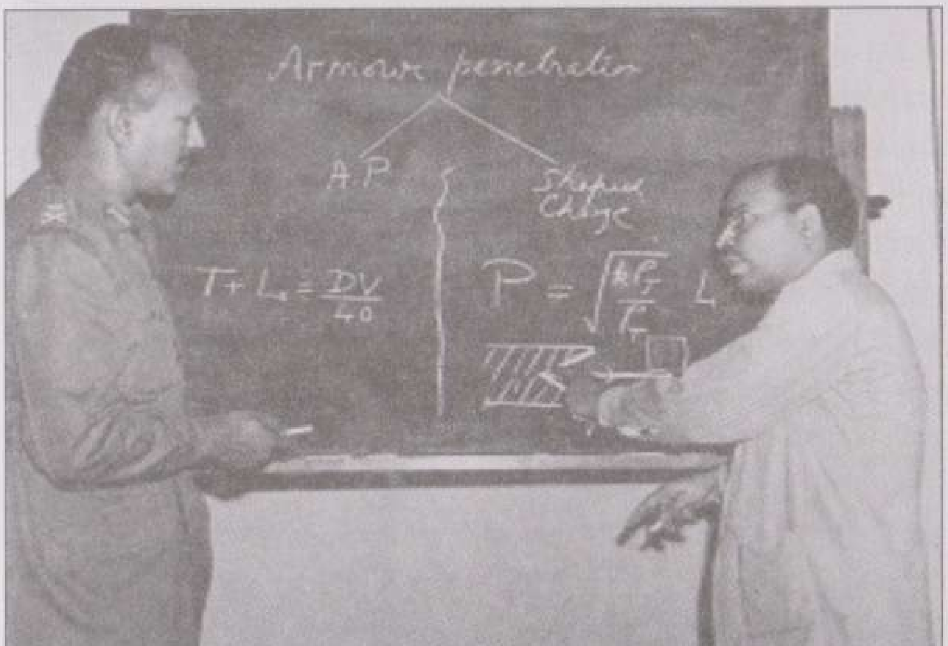
आजादी के बाद के दशक में बहुत-से सरकारी अधिकारी दूर-दूर की सरकारी यात्राएं करने में अधिक दिलचस्पी लेने लगे थे। कारण था, यात्रा भत्ते का प्रलोभन। आने-जाने को मिलाकर एक पूर्ण यात्रा के लिए तीन जनों का प्रथम श्रेणी का किराया तथा आनुषंगिक (इंसीडेन्टल) खर्चा मिलता था। दादाजी ने प्रधानमंत्री नेहरूजी को इस बात से अवगत कराया। साथ ही सुझाव भी दिया कि यात्रा भत्ते में वास्तविक किराया तथा आनुषंगिक खर्चा ही मिलना चाहिए। नेहरूजी को यह जानकर आश्चर्यमय प्रसन्नता हुई और उन्होंने तुरंत ही आदेश जारी करवाए। आदेश पाकर कई अधिकारी सकते में आ गए।



सेना प्रमुखों के सामने शिक्षक

बहुतों के मन में यह प्रश्न उठता है कि अहिंसा और शांति के उपासक, विनयशील एवं करुणामय डॉ. कोठारी रक्षा तथा युद्ध जैसे क्षेत्र में कैसे कार्य करते होंगे?

सेना के कड़े अनुशासन एवं कायदों के साथ एक वैज्ञानिक शिक्षक का तालमेल कैसे बैठता होगा? लेकिन सच तो यह है कि डॉ. कोठारी ने कुशाग्र बुद्धि, संयमित जीवन और मानवीय प्रशासनिक कौशल द्वारा सेना के तीनों अगों के अधिकारियों के साथ ऐसा सौहार्द्रपूर्ण संबंध बनाया कि वे सभी उनका आदर करने लगे। डॉ. लवाकरे लिखते हैं, **''मानवीय स्वभाव और समस्याओं को गहराई से समझने की डॉ. कोठारी की क्षमता ने उन्हें सेना के प्रमुखों के सामने ऐसे खड़ा किया, जैसे– महाभारत में अर्जुन के सामने श्रीकृष्ण।''**



टैंक रक्षा प्रणाली के विशेषज्ञ जनरल जे.एन. चौधरी, रक्षा प्रयोगशाला, नई दिल्ली में, 1955। सैनिक-वैज्ञानिक संगम।



रक्षा विज्ञान से रुख्सत

1961 तक देश में रक्षा विज्ञान प्रयोगशालाओं की एक शृंखला खड़ी हो चुकी थी। रक्षा वैज्ञानिकों ने विभिन्न क्षेत्रों में अपने शोध कार्यों को बखूबी स्थापित कर दिया था।

तभी भारत सरकार द्वारा नवगठित विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष पद के लिए डॉ. कोठारी को आमंत्रण मिला। 1961 में यह पद स्वीकारते हुए डॉ. कोठारी ने रक्षामंत्री श्री कृष्णा मेनन से आग्रह किया कि वे उन्हें रक्षा सलाहकार के पद से मुक्त करें। श्री कृष्णा मेनन का उत्तर कुछ इस तरह था।

''मैंने आपका पत्र मिश्रित भावनाओं के साथ प्राप्त किया है। मैं उत्सुक हूं कि आपकी सेवाएं अब विश्वविद्यालयों को प्राप्त होंगी। आप जानते हैं कि मैं अपने स्वार्थ का त्याग इतनी आसानी से नहीं करता, विशेषकर तब जब वह सार्वजनिक जीवन से जुड़ी जिम्मेदारी हो। रक्षा से संबंधित तो बिल्कुल नहीं। आपके इस सुझाव ने कि आप आंशिक सेवाएं रक्षा विज्ञान विभाग को देते रहेंगे, मुझे अंसमजस में डाल दिया है। आपसे बेहतर इसे कोई नहीं जानता कि मैं आपकी सेवाओं की कितनी कद्र करता हूं और रक्षा विज्ञान में आपकी महती जरूरत की। लेकिन बिना सही शिक्षा के रक्षा विज्ञान का कार्य संभव नहीं है। यह बात ध्यान में रखते हुए मैं आपको पद मुक्त कर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के नये पद पर आसीन होने की स्वीकृति देता हूं। मुझे खुशी है कि आपने रक्षा शोध एवं विकास सलाहकार समिति का अध्यक्ष बनने का मेरा निवेदन स्वीकार किया। मुझे उम्मीद है कि अब आप अपनी ऊर्जा और समय की सुलभता के अनुसार रक्षा विज्ञान के साथ आयोग के कर्त्तव्यों का सुचारु रूप से निर्बहन कर सकेंगे।''



विश्वविद्यालय अनुदान आयोग

24 फरवरी 1961 को डॉ. कोठारी नवगठित विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष बने। शिक्षा जगत् में डॉ. कोठारी की नियुक्ति का व्यापक स्वागत हुआ, क्योंकि तब तक उनकी ख्याति एक विद्वान वैज्ञानिक एवं लोकप्रिय शिक्षक के रूप में स्थापित हो चुकी थी। 1964 में डॉ. कोठारी की अध्यक्षता में शिक्षा आयोग का गठन किया गया। इसका उद्देश्य शिक्षा के सभी आयामों को संबोधित करना था। आयोग का कार्यकाल दो वर्षों का था।

डॉ. कोठारी देश के नव उत्थान में शिक्षा की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका देख रहे थे। 29 जून 1966 को शिक्षा आयोग की रिपोर्ट तत्कालीन शिक्षा मंत्री श्री एम.सी. चागला को भेंट करते हुए उन्होंने कहा था **''हमने अपना कार्य ठीक इक्कीस माह पूर्व 2 अक्तूबर 1964 को गांधी जयंती के दिन प्रारंभ किया था।''** दो वर्षों के कार्यकाल से तीन माह पूर्व ही आयोग ने इतना विशाल व व्यापक कार्य पूरा कर लिया। इस कार्य के लिए 12 टास्क फोर्स तथा 7 कार्यकारी समूह बनाए गए थे, जो शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों व उनसे संबंधित समस्याओं पर केंद्रित थे। लगभग 9000 व्यक्तियों का साक्षात्कार लिया गया, जिनमें देश-विदेश के विषय विशेषज्ञ शामिल थे। डॉ. कोठारी के साथ आयोग के अधिकारियों ने देश के सभी राज्यों व केंद्र शासित प्रदेशों की यात्राएं कीं। विभिन्न समाजों, धर्मों, ज्ञान-विज्ञान आदि का अध्ययन कर शिक्षा में प्रयोग व नवाचार के भरपूर अवसरों को स्थान दिया। यूनेस्को, अमेरिका, सोवियत रूस, ब्रिटेन, कॉमनवेल्थ देशों, जापान तथा अन्य एशियाई देशों का भी सहयोग लिया गया।

श्री चागला को संबोधित पत्र में डॉ. कोठारी ने लिखा–

''विज्ञान आधारित विश्व में देश के समग्र विकास, कल्याण एवं सुरक्षा के लिए शिक्षा एवं अनुसंधान निर्णायक भूमिका अदा करते हैं। विज्ञान से व्याप्त इस दुनिया का यह लक्षण है कि निश्चित तौर पर भविष्य की परिस्थिति के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता। इसलिए ऐसी शिक्षा योजना की महती आवश्यकता है, जिसमें अंतर्निहित लचीलापन हो और जो बदलती हुई परिस्थिति के साथ सामञ्जस्य बिठा सके। यह बात प्रयोगों व नवाचारों को महत्त्व देकर ही रेखांकित की जा सकती है।''

15 जुलाई 1964



PAISE

Education System To Be Reviewed

Dr. KOTHARI HEADS UNION COMMISSION

"The Times of India" News Service

NEW DELHI, July 16.

THE Government of India today announced the appointment of a 16-member education commission to survey the entire field of educational development and to review the educational system.

The commission will include four foreign consultants of international repute—three from the United Kingdom and one from the U. S. —and some more may be associated with its work at a later stage.

Dr. D. S. Kothari, chairman of the University Grants Commission, has been appointed chairman of the commission which is expected to submit its final report by the end of March, 1966.

The commission may submit interim reports dealing with limited sectors or problems of education where immediate implementation of certain programmes is necessary.

The Government's intention to appoint an education commission was indicated by the Education Minister, Mr. M. C. Chagla, in Parliament during the budget session.

NATIONAL PATTERN

There have been two earlier commissions one on university education headed by Dr. S. Radhakrishnan, and the other on secondary education, presided over by Dr. Lakshmanaswami Mudaliar.

The present commission, which will cover all aspects in the educational sphere, has been set up to advise on how a national pattern could be established and on the general principles and policies for its development at various stages.

Among the educationists on the



You Said It

By LAXMAN



. . . you can't say things are not improving gradually . . These potholes, for instance, have become much smaller now.

of the Commonwealth Education Liaison Unit in London;

Mr. P. N. Kirpal, educational adviser to the Government of India;

Prof. M. V. Mathur, Professor of Economics and Public Administration, University of Rajasthan, Jaipur;

Dr. B. P. Pal, director, Indian Agricultural Research Institute, New Delhi;

Miss S. Panandikar, head of the department of education, Karnatak University, Dharwar;

Prof. Roger Revelle, Dean of Research, University of California, U.S.A.;

Mr. K. G. Saiyidain, a former educational adviser to the Government of India;

Dr. T. Sen, rector, Jadavpur University, Calcutta;

Mr. Jean Thomas, inspector-general of education, France, and formerly assistant director-general of UNESCO: (Two names of members

शिक्षा आयोग की रिपोर्ट भारत व अन्य विकासशील देशों के विकास के लिए एक युगान्तरकारी घटना थी। भारत में तो इसे पूर्ण रूप से लागू नहीं किया गया, लेकिन यूनेस्को ने दो दशकों तक अंतर्राष्ट्रीय शिक्षा विकास आयोग के तहत इसके प्रस्तावों का व्यापक उपयोग किया। शिक्षा आयोग, जो कोठारी आयोग के नाम से विख्यात हुआ, की सिफारिशों में मुख्य मुद्दे थे—स्कूल शिक्षा, उच्च शिक्षा, तकनीकी शिक्षा, कृषि शिक्षा, वोकेशनल शिक्षा, शिक्षक प्रशिक्षण, महिला शिक्षा, पिछड़े वर्ग एवं आदिवासियों की शिक्षा, पाठ्यक्रम, विद्यालय एवं समाज संबंध, शिक्षण संस्थानों का प्रशासन, वित्त, कार्यप्रणाली एवं व्यवस्था आदि।

शिक्षा में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने के लिए डॉ. कोठारी ने इस रिपोर्ट में निम्नलिखित पहलुओं पर विशेष जोर दिया है— नैतिक शिक्षा तथा सामाजिक दायित्वों का ज्ञान, शिक्षा के सभी स्तरों पर कार्य अनुभव के अवसर तथा समाज सेवा, सैकेंडरी शिक्षा का व्यवसायीकरण, श्रम कार्य एवं लघु उद्योग की शिक्षा को बढ़ावा देना, उच्च शिक्षा के केंद्रों को सुदृढ़

1961 में राष्ट्रीय प्रगति में शिक्षा को जो स्थान मिला वह कालांतर में भुला दिया गया।

प्रधान मंत्री भवन
PRIME MINISTER'S HOUSE
NEW DELHI

No. 1365-PMH/63

May 31, 1963

My dear Kothari,

Thank you for your letter of the 31st May in which you suggest appointing a number of "gifted men" professors on a national basis to teaching posts in Universities. I rather like your idea. I think it is worth working out this scheme fully.

Yours sincerely,
Jawaharlal Nehru

Dr. D.S. Kothari,
Chairman,
University Grants Commission,
New Delhi.

असाधारण प्रतिभावान व्यक्तियों को राष्ट्रीय स्तर के प्रोफेसर नियुक्त करने के सुझाव पर प्रधानमंत्री पं. नेहरू की स्वीकृति।

बनाना, विभिन्न क्षेत्रों के लिए आधुनिक विश्व स्तरीय केंद्रों की स्थापना, शिक्षकों का प्रशिक्षण एवं सुधार, कृषि शिक्षा एवं संबंधित क्षेत्रों में शोध आदि। उन्होंने शिक्षा के सभी पहलुओं पर शोध, प्रयोग एवं नवाचारों को विशेष स्थान दिया।

विज्ञान शिक्षा के लिए डॉ. कोठारी ने भारत-अमेरिका विज्ञान शिक्षा पर सम्मेलन करवाए। इन सम्मेलनों के विषय भौतिकी, जीव विज्ञान, रसायन विज्ञान एवं गणित थे। कई नोबल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिकों ने इनमें शिरकत की थी। इन सम्मेलनों के बाद उपरोक्त चार क्षेत्रों में शिक्षकों एवं विद्यार्थियों के लिए विज्ञान पत्रिकाएं शुरू की गईं जो आज भी प्रकाशित होती हैं।

देश के विश्वविद्यालयों के प्रतिभावान विज्ञान शिक्षकों को विशेष प्रोत्साहन देने के लिए डॉ. कोठारी की पहल पर 'एमेरिट्स वैज्ञानिक योजना' का शुभारंभ 1963 में हुआ।

पंडित नेहरू की अध्यक्षता में गठित वैज्ञानिक एवं औद्योगिकी अनुसंधान परिषद्

(सी.एस.आई.आर) की कार्य समिति के सदस्य के रूप में डॉ. कोठारी ने देश में प्रौद्योगिकी प्रयोगशालाओं की स्थापना में विशेष योगदान दिया।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के तहत डॉ. कोठारी ने देश के विभिन्न भागों में कॉलेज शिक्षकों की क्षमता बढ़ाने के लिए ग्रीष्मावकाश में ग्रीष्मकालीन 'समर इंस्टीट्यूट' स्थापित करवाए। प्रारंभ में केवल विज्ञान विषय इसके लिए चुना गया, परंतु बाद में अन्य विषयों का भी समावेश होता चला गया। स्कूल शिक्षकों को भी इसमें सम्मिलित किया गया। शिक्षकों के ज्ञानवर्धन का यह कार्यक्रम बहुत लोकप्रिय हुआ।

शिक्षा आयोग की रिपोर्ट, जो वास्तव में व्यापक ज्ञान एवं गहन शोध का नतीजा है, को केवल एक रिपोर्ट कह देना कई सहकर्मियों को अचरज भरा लगा। रिपोर्ट को भेंट करते हुए डॉ. कोठारी ने लिखा है, **''आशा है, यह देश की शिक्षा प्रणाली को सुव्यवस्थित करने में मददगार साबित होगी! यह रिपोर्ट शिक्षा में क्रांति लाने के लिए कुछ आधारभूत विचार एवं ढांचा तैयार करने में पहली सीढ़ी बनकर प्रस्तुत होगी।'' 'इस असीम विनम्रता एवं अहंकाररहित घोषणा ने सहकर्मियों का दिल छू लिया,'** लिखते हैं, डॉ. पी. जे. लवाकरे।

डॉ. कोठारी ने शिक्षा आयोग के कार्य को भारत के आर्थिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक विकास व प्रगति के लिए प्रासंगिक एवं प्राणशक्ति देने वाला बताया था। महात्मा गांधी के जीवन व चिंतन से प्रेरित इस रिपोर्ट में श्रमदान, सामाजिक कर्त्तव्यों एवं धर्म व मूल्यों की शिक्षा पर विशेष जोर दिया गया।

श्री प्रेम कृपाल ने आयोग के कार्यकाल के दिनों को याद कर लिखा है, 'जिन्होंने भी उनके साथ कार्य किया, उन्होंने पाया कि वे उस व्यक्ति की बेहतरीन खूबियों को निखारने में कितनी सहायता करते थे। डॉ. कोठारी के लिए विज्ञान जीवन के उच्चतम मूल्यों को आत्मसात करने का माध्यम बना।' श्री प्रेम कृपाल आगे लिखते हैं, ''मुझे याद आता है, रिपोर्ट के प्रथम अध्याय के अंतिम पैरा का ड्राफ्ट तैयार करते हुए उन्होंने शीर्षक दिए थे—**'सामाजिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्य'** तथा **'चुनौती और विश्वास'**। यही विचार आगे चलकर 'अणु और अहिंसा' के समन्वयात्मक दृष्टिकोण का आधार बने।''



कैम्ब्रिज और शाकाहार

कैम्ब्रिज के दिनों में उनके मित्र व परिचित कई धर्मों व समुदायों से थे। कई व्यक्तियों ने अंग्रेजों की संगत पाकर अपना खानपान व वेशभूषा बदल ली थी। अकसर भोजन को लेकर विवाद होता था। परिचितों के तर्क होते, "मीट खाने में क्या बुराई है? पेड़-पौधों में भी जीव होता है, दूध, अंडे शाकाहारी कैसे हुए" आदि। रोज-रोज के तर्कों के तीर से छुटकारा पाने के लिए एक दिन डॉ. कोठारी बोल पड़े, "...तो फिर तुम कुत्ता खाओ, गधा खाओ, आदमी खाओ... सभी तो मांस हैं।" अचानक भावावेश में बोलते हुए अपने साथी को देख कर सभी चुप हो गए। फिर डॉ. कोठारी बोले, **"दरअसल हम सब एक सीमा बांधते हैं। तुमने भी सीमा बांध रखी है कि ये सब नहीं खाओगे। यही बात मेरी अपनी भी है। फर्क सिर्फ इतना है कि किसने अपनी लाइन कहां खींच रखी है।"**

वर्षों बाद विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के केन्टीन में मिलने वाले भोजन के संबंध में निर्णय लिया जाना था। हमेशा की तरह उन्होंने अन्य लोगों की राय जाननी चाही। सभी ने यही सलाह दी कि आयोग के भोजनालय में केवल शाकाहारी भोजन ही दिया जाना चाहिए। इससे किसी को भी परेशानी या दुविधा नहीं होगी। ऐसा हुआ भी और वर्षों तक यह परंपरा कायम रही।



शिक्षा और चरित्र निर्माण

शिक्षा आयोग (1964-66) की रिपोर्ट प्रस्तुत करने के कुछ वर्षों के बाद दादाजी ने कहा था, **''यदि यह रिपोर्ट पुनः प्रस्तुत करनी पड़े तो मैं इसका शीर्षक 'शिक्षा एवं राष्ट्रीय विकास' से बदल कर 'शिक्षा एवं चरित्र निर्माण' (एजुकेशन एंड कैरेक्टर बिल्डिंग) रखना चाहूंगा।''** पूछने पर उन्होंने बताया कि **सही शिक्षा से चरित्र का विकास होगा, जिससे राष्ट्रीय विकास स्वतः ही हो जाएगा, लेकिन बिना चरित्र के राष्ट्रीय विकास तो समाज में केवल लोभ, घृणा और हिंसा ही ला सकेगा।**

17 मार्च 1991 को दादाजी ने अपने दो पोतों आदित्य व प्रिंसु को परीक्षा में अच्छी सफलता पर बधाई देते हुए एक पोस्टकार्ड भेजा। जिसमें लिखा था, **''शिक्षा का सच्चा उद्देश्य यह है कि अपने चारों ओर के अद्भुत संसार को समझा जाए, आत्मसंयम को विकसित किया जाए और अपने घर और समाज की प्रसन्नता के लिए योगदान दिया जाए। ऐसा करने से शिक्षा एक आनन्ददायी, अति उत्साहवर्धक और प्रेरणादायक अभियान बन जाती है।''**



असमानता की बेड़ियां

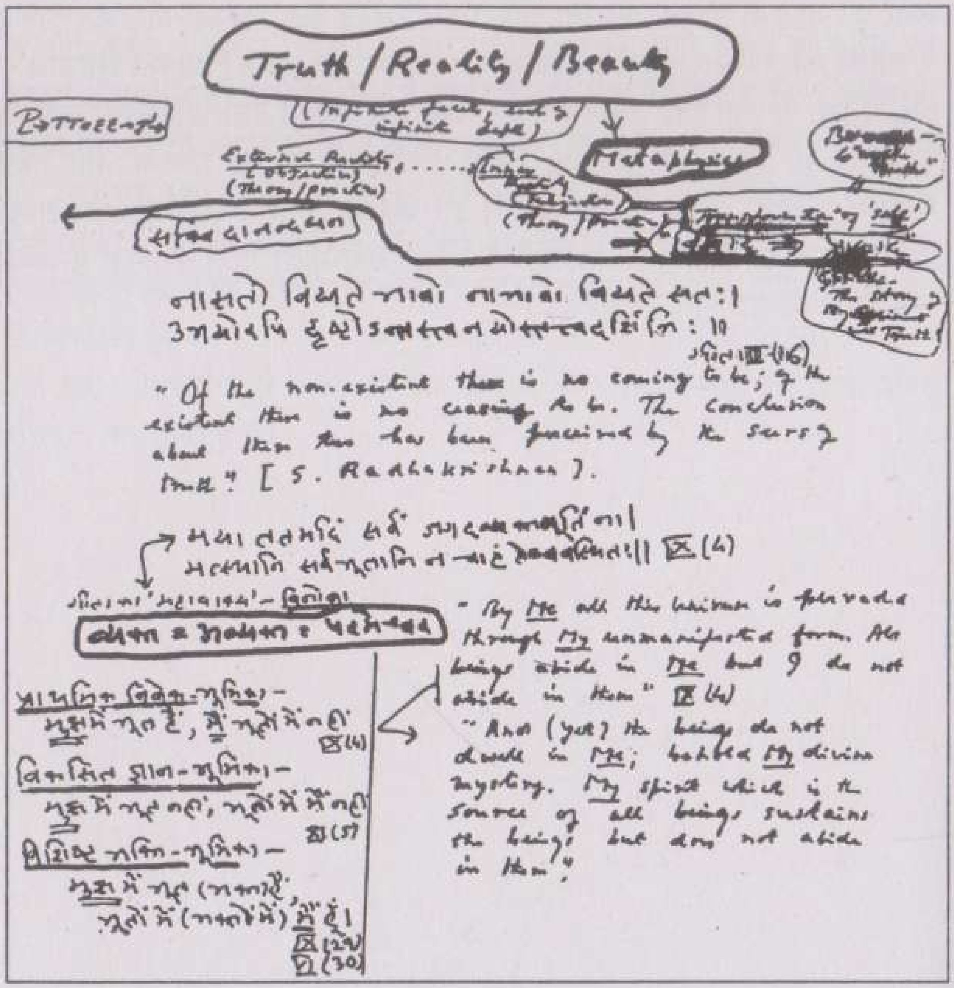
दादाजी को यह पूर्ण विश्वास था कि शिक्षा इंसान के आत्मसम्मान को पुनः जगा सकती है, जो सम्मान सदियों की परंपरागत बेड़ियों और विपन्नता से प्रभावित रहा है।

एक दिन दोपहर के भोजनावकाश का समय था। शिक्षा मंत्रालय, नॉर्थ ब्लॉक के कमरे की बड़ी-सी खिड़की से नीचे झांकते हुए उन्होंने देखा। चपरासियों, कर्मचारियों व क्लर्कों का बड़ा-सा हुजूम धूप सेंकते हुए आराम कर रहा है। आपसी मेलजोल व हंसी-मजाक के बीच वहां उत्सव का माहौल था। दादाजी ने पास खड़े शिक्षा मंत्रालय के सचिव श्री प्रेम कृपाल से कहा, **''मेरी अभिलाषा है कि वह दिन भी आए, जब मंत्रीगण व सचिव आदि भी प्रसन्नता से इस विशाल समूह में समानता और सच्ची मानवीयता के साथ घुलें-मिलें व आनंद उठाएं।''** सही शिक्षा से ही समानता व सच्ची मानवीयता का द्वार खुल सकता है।



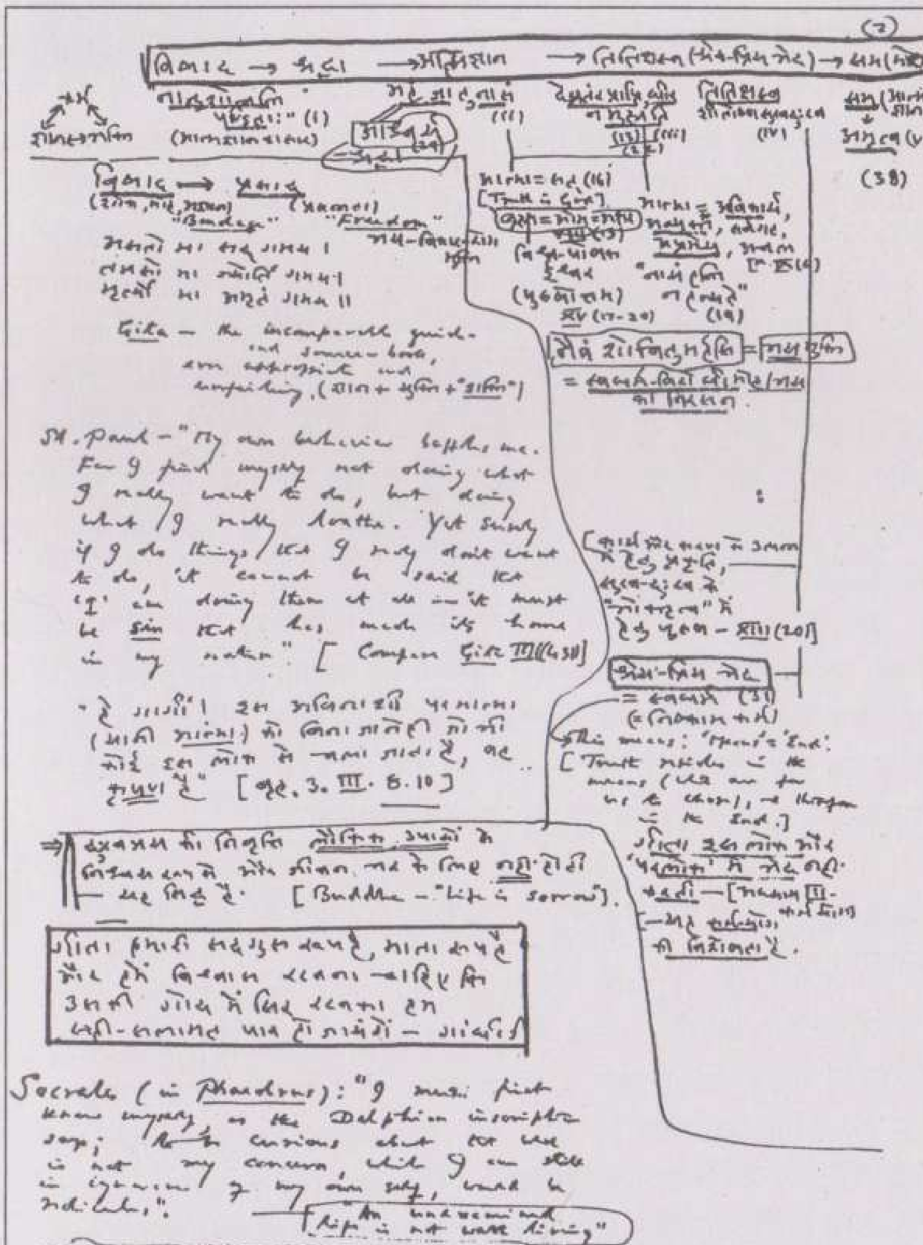
स्यादवाद, योग और आधुनिक विज्ञान

दादाजी की व्यस्त दिनचर्या में स्वाध्याय के लिए हमेशा समय रहता था। यही वह समय होता था, जब वे स्वयं को आत्मकेंद्रित कर पाते थे। उनके अध्ययन का दायरा दुनिया के उत्कृष्ट ज्ञान के ओर-छोर तक फैला था। भारतीय मनीषा इसके केंद्र में थी।



व्याख्यान की तैयारी के दौरान बनाई गई एक ट्रांसपरेन्सी।

जैन धर्म के सिद्धांतों का भी उन्होंने गहन मनन किया था। स्यादवाद (अनेकान्तवाद) जैसी महत्त्वपूर्ण अवधारणाओं को वे आधुनिक (भौतिक) विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में देख कर नई रोशनी जगाना चाहते थे। भारतीय अध्यात्म और आधुनिक विज्ञान की उनकी



स्वाध्याय के नोट्स।

गहरी समझ का लाभ पश्चिम के अनेक वैज्ञानिकों व डॉक्टरों ने उठाया, जिनमें कई नोबल पुरस्कार विजेता थे। उन सभी ने बाद में दादाजी को अपना गुरु या परम मित्र बताया है।

जैन आचार्यों व जैन समाज से वे करीब से जुड़े रहे। अखिल भारतीय श्वेतांबर स्थानकवासी जैन सम्मेलन के वे अध्यक्ष रहे। 1974 में भगवान महावीर के निर्वाण के 2500 वर्ष पूरे हो रहे थे। इस उपलक्ष्य में मगध विश्वविद्यालय, गया में एक तीन दिवसीय अधिवेशन का आयोजन किया गया। इसमें जैन आचार्यों, उनके संघ एवं जैन विद्वानों आदि ने भाग लिया। दादाजी ने इस अधिवेशन में उद्‌घाटन भाषण दिया, जिसे श्रोता आज भी श्रद्धा से याद करते हैं, विषय था, **''आधुनिक विज्ञान एवं स्यादवाद।''**

योग और पारंपरिक चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में दादाजी की विशेष रुचि थी। वे स्कूलों में योग शिक्षा प्रारंभ करवाना चाहते थे। दादाजी की अध्यक्षता में योग शिक्षा पर एक समुचित कार्यक्रम की रूपरेखा बनाई गई थी। भारतीय चिकित्सा पद्धतियों के अनुसंधान पर कार्य कर रहे केंद्रीय संगठनों से वे सीधे जुड़े रहे। उनकी अध्यक्षता में **''योग, विज्ञान और मानव''** विषय पर पहला अखिल भारतीय सेमिनार आयोजित किया गया। लगभग 300 विद्वानों ने भाग लिया जिनमें योग के प्रशिक्षकों के अलावा डॉक्टर, वैज्ञानिक, शिक्षक आदि सम्मिलित थे।

डॉ. कोठारी ने अपने स्वागत भाषण में कहा : **''विज्ञान का अल्पकालीन लक्ष्य जो भी हो, मगर दीर्घकालीन लक्ष्य है–मानव (स्वयं) को पहचानना। आधुनिक विज्ञान के एक पुरोधा इरविन श्योडिंगर का उद्धरण देते हुए उन्होंने कहा, ''विज्ञान का एक नहीं, बल्कि एक मात्र ध्येय यह है कि इस प्रश्न का उत्तर खोजें कि हम कौन हैं? और इसके लिए योग में अध्ययन-मनन व शोध की बहुत आवश्यकता है।''**

आज हम देखते हैं कि आसन और प्राणायाम तो हम फिर भी करने लगे हैं, लेकिन योग के लक्ष्य व मूल भावना को भूल गए हैं। योग के प्रथम सोपान 'यम' के बिना योग संभव नहीं है।



संपूरकता का सिद्धांत

प्रो. नील्स बोहर द्वारा प्रतिपादित "संपूरकता के सिद्धांत" को दादाजी ने विज्ञान के क्षेत्र का एक सार्थक एवं क्रांतिकारी कदम माना। उन्होंने अपने व्याख्यानों में बार-बार इसका उद्धरण दिया है। एक व्याख्यान में उन्होंने लिखा है :

"विज्ञान की परिधि में की गई यह खोज भारतीय आध्यात्म की एक मूल अवधारणा से अप्रत्याशित रूप से समानता रखती है। इसकी उपादेयता विज्ञान के क्षेत्र में जितनी है, उतनी ही आम जीवन की द्वन्द्वात्मक परिस्थितियों से निपटने में भी है। सुख-दुःख, जीवन-मरण, ठंडा-गर्म आदि कई द्वन्द्वों से हम सब परिचित हैं। सतही तौर पर देखें तो ये परस्पर विरोधी प्रतीत होते हैं। लेकिन गहराई से विचार करने पर ये विरोधी तत्त्व एक-दूसरे के पूरक होते हैं और एक-दूसरे को प्रकाशित करते हुए 'पूर्ण' के अंशों के रूप में दिखाई देते हैं। यही संपूरकता का सिद्धांत है। यह अवधारणा परस्पर विरोधी मानवीय अनुभवों में अंतर्निहित समरसता की संभावनाओं को उजागर करती है। नैतिक और सामाजिक धरातल के नये आयामों को खोलती है और मानव को दुःखों से उबरने में नई दृष्टि प्रदान करती है।"

बोहर ने बड़ी उम्मीद से उस दिन की कल्पना की थी, जब यह सिद्धांत स्कूल विज्ञान में पढ़ाया जाएगा और जीवन की चुनौतियों का सामना करने में विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करेगा। दादाजी भी इसे चरितार्थ करना चाहते थे।

भौतिक विज्ञान का यह जाना-पहचाना सिद्धांत है। इसके अनुसार विद्युत कण यानी इलैक्ट्रॉन के दो परस्पर विरोधी गुण होते हैं। एक उसका कण रूप है और दूसरा तरंग रूप। जब यह अपने कण रूप में होता है, तो यह 'अणोरणीयान' यानी सूक्ष्मतम रूप में होता है और जब तरंग रूप में होता है, तो 'महतो महीयान' यानी अपने अनंत रूप का प्रदर्शन करता है। पदार्थ का यह दोहरा चरित्र लुई द ब्रॉग्ली नामक वैज्ञानिक ने खोजा था, लेकिन विलक्षण बात यह है कि इलेक्ट्रॉन जब अपने कण रूप में होता है, तो अपना तरंग रूप प्रदर्शित नहीं कर सकता और जब तरंग रूप में होता है तो कण रूप नहीं दिखा सकता। यह परस्पर वर्जना (म्युचुअल एक्सक्लूसिविटी) ही सम्भवतः उसकी परस्पर पूरकता की कुंजी है। ईश्वर का सगुण

और निगुर्ण रूप, जैन धर्म दर्शन का अनेकान्वाद बौद्ध दर्शन का प्रकृतिस्थ और समुदानीत गौत्र और चीन का यिन-येंग, सभी नील्स बोहर के संपूरकता के सिद्धांत के आध्यात्मिक रूप हैं।

दादाजी ने इस सिद्धांत को भारतीय अध्यात्म की रोशनी में और निखारा तथा इसके व्यापक उपयोग का आवाहन किया।



सूरज क्यों गरम लगता है?

श्रीमती कपिला वात्स्यायन ने अपने संस्मरण में लिखा है, 'एक दिन सुबह डॉ. कोठारी एक प्रश्न लेकर उपस्थित हुए। **"सूरज क्यों गरम महसूस होता है?"–"सूरज क्यों गरम महसूस होता है?"** तीन बार उन्होंने यह प्रश्न दोहराया। स्तब्ध रह गए श्रोता जिनमें थे– वैज्ञानिक, खगोल वैज्ञानिक, सूक्ष्म जीवविज्ञानी, दार्शनिक, पुरातत्ववेता,

इन्दिरा गांधी
राष्ट्रीय कला केन्द्र
INDIRA GANDHI
NATIONAL CENTRE FOR THE ARTS

[illegible]

D.O.NO.MS/IGNCA/ 646 /91

April 9, 1991

Revered Dr. Kothari

No words of formal thanks will ever contain what I want to communicate to Guru, Guide and Philosopher. I was not joking when I said that the sanskars that you gave us as students, is the greatest heritage by which we live. It is said "If you have great parents and great teachers, your life is made." I have been fortunate, more than fortunate, in both. I hope that in some small measure we shall be able to be equal to the tasks which you had laid before us. We shall never be able to match the work and dedication and selflessness of your life. I pray for your blessings and more I pray that maybe you continue to give us light, to see and light, to be.

With my profound and humblest regards,

Yours sincerely,

(KAPILA VATSYAYAN)

Prof.D.S.Kothari,
A-3,Chhatra Marg,
DELHI: 110007.

श्रीमती कपिला वात्सयायन के अपने गुरु के प्रति उद्‌गार।



कला मर्मज्ञ, इतिहासकार और समाजशास्त्री। फिर वे श्रोताओं को व्यष्टि, सृष्टि व समष्टि के आयामों की यात्रा पर ले चले। ब्रह्मांड को विज्ञान और अध्यात्म द्वारा समझाते हुए उन्होंने भगवद्गीता के क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ के तीन श्लोकों का सहारा लिया। हम मंत्रमुग्ध बहते चले।

''ऐसी यात्रा तो वही करवा सकता था, जिसने 'संपूर्णता' का स्वयं अनुभव किया हो। व्याख्यान की समाप्ति पर जो सूर्य बाहर चमक रहा था, वह भीतर भी चमकने लगा।

डॉ. कोठारी प्राचीनकाल के ऋषि थे।''



विज्ञान अकादमी से संबंध

भारत के वैज्ञानिकों व उनकी गतिविधियों की राष्ट्रीय संस्था 'भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी' (इनसा) से डॉ. कोठारी का संबंध 1936 से ही था। आगे आने वाले 50 वर्षों तक उन्होंने संस्था में विभिन्न पदों पर कार्य किया।

उन्होंने अकादमी के पुस्तकालय द्वारा सदस्य वैज्ञानिकों के लिए 'विज्ञान सूचना पत्र' निकलवाया। इस तिमाही पत्र में देश-विदेश की विज्ञान पत्रिकाओं में छपे प्रमुख लेखों की विषयसूची होती थी। साथ ही अखबारों आदि में विज्ञान समाचारों की एक झलक होती थी।

अल्बर्ट आइंस्टाइन के विचारों से डॉ. कोठारी बहुत प्रभावित थे। आइंस्टाइन के स्वर्ण जयंती वर्ष में उन्होंने एक पुस्तिका प्रकाशित करवाई, जिसमें आइंस्टाइन के जीवन, विचारों और संदेश को संकलित किया गया था।

देश के युवा वैज्ञानिकों पर उन्हें पूरा भरोसा था। उनके प्रोत्साहन व पुरस्कार के लिए उन्होंने कलकत्ता की एक निजी संस्थान को प्रेरित किया। 1974 में 32 वर्ष से कम उम्र के 21 युवा वैज्ञानिकों को अकादमी के प्रथम राष्ट्रीय युवा वैज्ञानिक पुरस्कार प्रदान किए गए। बाद में अकादमी द्वारा यह पुरस्कार प्रति वर्ष दिया जाने लगा।

डॉ. कोठारी का आग्रह रहता था कि अकादमी के शीर्षस्थ वैज्ञानिक स्कूल व कॉलेज के छात्र-छात्राओं से लगातार संवाद करें। जब डॉ. कोठारी अकादमी के अध्यक्ष बने (1973-76), तब उन्होंने अकादमी के सभागार में विज्ञान के विद्यार्थियों के लिए कई संवाद सत्र करवाए। ये बच्चों के लिए यादगार लम्हे बन गए। छात्र-छात्राओं को कठिन-से-कठिन वैज्ञानिक अवधारणाएं सरलता से समझाने की उनकी शैली अदभुत थी।

28 फरवरी का दिन राष्ट्रीय विज्ञान दिवस के रूप में मनाया जाता है। इसी दिन भारत के प्रथम नोबल पुरस्कार विजेता सर. सी. वी. रामन ने अपने मौलिक शोध की घोषणा की थी। इसे "रामन प्रभाव" के रूप में जाना जाता है। विज्ञान दिवस पर डॉ. कोठारी बच्चों के लिए विशेष आयोजन करवाते थे। विज्ञान अकादमी में बच्चे

आमंत्रित होते और विज्ञान की विभिन्न गतिविधियों में उत्साह से भाग लेते। पुरस्कार पाते और सभी को विज्ञान संबंधी साहित्य भेंट किया जाता था।

राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी ने उन्हें 1966 में शांति स्वरूप भटनागर मैडल (पुरस्कार) तथा 1978 में मेघनाद साहा मैडल (पुरस्कार) से सम्मानित किया। मेघनाद साहा पुरस्कार समारोह पर ही डॉ. कोठारी ने अपना प्रसिद्ध व्याख्यान **"एटम एंड सेल्फ"** अर्थात् "अणु और स्व" अपने गुरु को समर्पित किया था।



भारतीय भाषाओं में विज्ञान शिक्षा

दुनिया के कई देशों में विज्ञान की उच्चतम शिक्षा वहां की राष्ट्रीय भाषा में उपलब्ध करवाई जाती है, लेकिन भारत में यह अब तक संभव नहीं हो पाई है।

आजादी के बाद तक विज्ञान की शिक्षा केवल अंग्रेजी में ही उपलब्ध थी, जबकि देश की क्षेत्रीय भाषाएं बहुत विकसित हैं और उच्च कोटि के साहित्य से परिपूर्ण हैं। ऐसे में विज्ञान विषय के लिए सही शब्दावली का निर्माण विभिन्न भारतीय भाषाओं की जरूरत बन गया। इस आवश्यकता को स्वीकारते हुए 1960 में भारत सरकार द्वारा डॉ. कोठारी की अध्यक्षता में **"विज्ञान और तकनीकी शब्दावली आयोग"** का गठन किया गया। चूंकि विज्ञान एक अंतर्राष्ट्रीय गतिविधि है। इसलिए डॉ. कोठारी ने बड़ी कुशलता से विज्ञान शब्दावली तैयार करने के नियम व निर्देश रेखांकित करवाए। इन निर्देशों की मदद से भारतीय भाषाओं में एक विशाल विज्ञान शब्दावली तैयार की गई, जिसमें बड़ी संख्या में शिक्षकों, वैज्ञानिकों, शिक्षाविदों व अन्य विद्वानों ने सहयोग दिया। आज भी इस शब्दावली को सरकारी मान्यता प्राप्त विज्ञान शब्दकोष के रूप में प्रयोग किया जाता है।

डॉ. कोठारी का यह दृढ़ विश्वास था कि बच्चों की विज्ञान शिक्षा उनकी मातृभाषा में ही होनी चाहिए। कोठारी आयोग की रिपोर्ट में भी भारतीय भाषाओं के विकास पर विशेष जोर दिया गया है, लेकिन वर्तमान में क्षेत्रीय भाषाएं कमजोर पड़ती नजर आ रही हैं। इन भाषाओं में शिक्षा का स्तर अप्रत्याशित रूप से गिर गया है। कोठारी आयोग की सिफारिशों को यदि सरकार द्वारा लागू कर लिया गया होता तो संभवतः आज शिक्षा का स्वरूप ही कुछ और होता। कई देशों ने इसका लाभ उठाया। 1971 में यूनेस्को द्वारा डॉ. एडगर फाउर की अध्यक्षता में जब शिक्षा के विकास पर अंतर्राष्ट्रीय आयोग का गठन किया गया, तब उन्होंने कोठारी आयोग की रिपोर्ट को ही आधार बनाया था। इस आयोग ने अगले दो दशकों तक दुनिया के विभिन्न देशों में शिक्षा के विकास पर कार्य किया।



दिल की बात मातृभाषा में

यू.जी सी. के दिनों की बात है। दादाजी शिक्षाविदों के एक दल के साथ जर्मनी गए। वहां एक दिन जर्मन विश्वविद्यालय के कुलाधिपति के साथ लंबी चर्चाएं हुईं। अंत में दादाजी और जर्मन कुलाधिपति कुछ गहरे दार्शनिक प्रश्नों पर बात करने लगे, लेकिन सहसा कुलाधिपति ने बातचीत का सिलसिला रोकते हुए कहा, ''हमें यह चर्चा कल तक के लिए स्थगित करनी पड़ेगी। मुझे एक द्विभाषिए की जरूरत है।'' अचरज से दादाजी ने कहा, ''आप तो अच्छी अंग्रेजी बोल रहे हैं। आपको कहां द्विभाषिए की जरूरत।'' कुलाधिपति ने कहा, ''जब मैं अपनी बात दिल से कहता हूं, तो मैं उसे अपनी मातृभाषा में ही व्यक्त कर सकता हूं।'' उपस्थित जनों को सुखद आश्चर्य हुआ और चर्चा अगले दिन के लिए स्थगित हो गई। दादाजी भी यही करते थे।

प्रो. यशपाल अपने छात्र दिनों को याद कर बताते हैं कि डॉ. कोठारी पढाते समय प्रमुख अवधारणाओं को हिंदी में दोहराने से नहीं चूकते थे। इससे कक्षा में सहजता और आत्मीयता का वातावरण बन जाता था।

प्रो. जयंत नार्लिकर ने भी आइंस्टाइन का उदाहरण देकर लिखा है ''वैज्ञानिक चर्चाओं के बीच जब आइंस्टाइन को अपनी अंतस् भावनाओं को व्यक्त करना होता था, तो वे बोलते-बोलते जर्मन भाषा में फिसल जाते थे। **''डॉ. कोठारी भी चर्चाओं तथा व्याख्यानों के बीच हिंदी बोलने लगते थे। यही गुण उन्हें अनजान व्यक्ति से सहजता से जोड़ देता था, वरना उनके ओहदे के व्यक्ति से दूरी तो स्वतः ही हो जाती है।''**

एक बार दादाजी गुजरात विद्यापीठ अहमदाबाद में व्याख्यान के लिए आमंत्रित थे। वे दादीजी के साथ मुझे व मेरी बहन को भी साथ ले गए। व्याख्यान हेतु जाने से पहले उन्होंने हमें जल्दी से तैयार होने को कहा। इस पर दादीजी बोल पड़ीं, ''हमें यहीं रहने दीजिए। आप तो अंग्रेजी में बोलेंगे। हमें वैसे भी कुछ समझ में आने वाला नहीं है।'' दादाजी के पुनः आग्रह करने पर वे हमें साथ लेकर चल दीं। व्याख्यान प्रारंभ हुआ। दादाजी ने हिंदी में बोलते हुए औपचारिक बातें कहीं। इस पर दादीजी ने हमसे कहा ''ये बातें तुम्हारे दादाजी ने हमारे लिए हिंदी में बोली हैं। अब वे अंग्रेजी में बोलेंगे। चुपचाप बैठे रहना।'' लेकिन दादाजी ने अंग्रेजी में लिखा हुआ पूरा व्याख्यान

KOTHARI SWITCHES OVER TO HINDI

Convocation address at Sardar Patel Varsity

From Our Correspondent

ANAND, December 15. — The Chairman of the University Grants Commission, Dr D. S. Kothari, addressing the convocation of Sardar Patel University at Vallabh Vidyanagar here today, switched over from his printed address in English to Hindi, when he realized that the convocation was conducted in Hindi and Gujarati.

To justify this he said, the regional and the international languages were the two wheels of the chariot of knowledge in our country.

Earlier, on the arrival of the Chancellor, Mr P. N. Bhagwati, a guard of honour was presented by the local N.C.C.

Dr Kothari said that education must be used as a deliberate and powerful instrument for social transformation and to increase national productivity.

For this purpose, he said that developing countries like India must lay special stress on general and technical education. Unless this was done, the gap between the developed and the developing countries would widen further.

He said India should follow the example of Japan which had increased its per capita income from the post-Second-War figure of less than $100 to about $600 today.

This seven-fold increase in a matter of 15 years was due to Japan's stress on general and technical education.

"We need strong and progressive universities, and these should be not only centres for imparting knowledge, but also promote among the students a sense of social responsibility and identification will the community." Dr Kothari said.

The acting Governor of Gujarat and Chancellor of the University, Mr P. N. Bhagvati, awarded degrees to 1,392 students.

Earlier, at a special convocation, Mr Bhagwati conferred the honorary degree of D Litt, on Acharya Kaka Kalelkar and Pandit Shuklalji for their "outstanding contribution to literature and Indian way of life."

हिंदी एवं प्रांतीय भाषाओं की महत्ता।

हिंदी में ही दिया। बीच-बीच में केवल अंग्रेजी के उद्धरण दिए। व्याख्यान समाप्त होने पर पास आकर उन्होंने पूछा, "कैसा रहा?" हमने कहा, "अच्छा लगा, लेकिन आप बीच-बीच में अटक रहे थे।" वे मुस्करा दिए। सच तो यह है कि उस उम्र में हमें एक वाक्य भी पूरा पल्ले नहीं पड़ा।

अपनी भाषा में अपनी ही भूमि पर बातचीत करना क्या कोई बड़ी बात है? लेकिन भाषा विवादों से भरे माहौल में औपचारिक तौर पर सहजता से पहल करना अलग बात है। कोठारी आयोग की रिपोर्ट में भी प्रादेशिक भाषा में शिक्षा के महत्त्व को विस्तार देते हुए इसकी जोरदार सिफारिश की गई है।



नई सिविल सेवा परीक्षा प्रणाली

देश की आजादी के बाद लगभग दो दशकों से भी ज्यादा समय तक सरकार की केंद्रीय प्रशासनिक सेवाओं के लिए उम्मीदवारों का चयन 1854 की मैकॉले रिपोर्ट पर आधारित था।

यह प्रक्रिया ब्रिटिश सिविल सेवा के लिए अपनाई गई थी। इन परीक्षाओं में इतिहास और सामाजिक विज्ञान जैसे विषयों पर अधिक जोर दिया गया था और आजादी के बाद बहुत बड़ी संख्या में उम्मीदवार यू.पी.एस.सी परीक्षाओं में बैठने लगे थे। इसलिए इस चयन प्रक्रिया में आमूल चूल परिवर्तन लाने की बड़ी आवश्यकता थी।

फरवरी 1974 को डॉ. कोठारी की अध्यक्षता में संघ लोक सेवा आयोग (यू.पी. एस.सी) द्वारा अधिकारियो के चयन के लिए एक समिति "रिक्रूटमेंट पॉलिसी एंड सलेक्शन मैथड" का गठन किया गया। कोठारी समिति ने इस समस्या पर गहन अध्ययन किया और मार्च 1976 में लोक सेवा आयोग को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की।

इसकी मुख्य सिफारिशें थीं :

1. भारतीय प्रशासनिक सेवा (आई.ए.एस) व अन्य सिविल सेवा के लिए एक ही परीक्षा प्रणाली हो।
2. वैकल्पिक विषयों में विज्ञान व तकनीकी के विषय जैसे इंजीनियरिंग व चिकित्सा आदि को शामिल किया जाए। साथ ही सब विषयों के लिए समान मूल्याकंन प्रणाली अपनाई जाए।
3. तीन चरणों में परीक्षा प्रणाली हो, प्रारंभिक परीक्षा (जो छटनी का कार्य करे), मुख्य परीक्षा जो लिखित हो, फिर साक्षात्कार तथा उत्तीर्ण उम्मीदवारों का प्रशिक्षण एवं परीक्षा।

1978 में देश में पहली बार अखिल भारतीय सेवाओं के लिए विभिन्न भारतीय भाषाओं में परीक्षाएं ली गई। 14 भाषाओं में समान रूप से पर्यवेक्षण करना तथा अकों के वितरण की समानता को बनाए रखना एक अत्यंत कठिन कार्य था। इसमें

पर्यवेक्षकों की विशेष ट्रेनिंग की व्यवस्था की गई। देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों से विभिन्न भाषाओं के शिक्षकों को सम्मिलित किया गया। डॉ. कोठारी के नेतृत्व में यह कार्य बिना किसी रुकावट के पूरा हुआ। देश की यह परीक्षा प्रणाली सर्वमान्य, नियमित और पूर्ण विश्वसनीय मानी गई है।



बच्चों की पुस्तकें, विज्ञान प्रदर्शनी और पुरस्कार

दादाजी के अस्सीवें जन्मदिवस पर पारिवारिक मिलन रखा गया। दादाजी का प्रपौत्र अंकुर तब मात्र दो वर्ष का था। अन्य पड़ दोहिते-दोहिती कुछ बड़े थे। दादाजी ने उन सबके साथ मिलकर एक "वंडर प्रोजेक्ट" प्रारंभ किया। बच्चे एक पुस्तिका में कुछ भी लिख सकते थे, प्रश्न कर सकते थे, चित्र बना सकते थे। जीवन के अंतिम दिनों तक वे हर क्षण को विस्मय से देखते रहे। बच्चों की निर्मलता की ओट में 'उसकी' झलक पाना उन्हें आनंदित करता था।

दादाजी ने उच्च कोटि की शिक्षा पाई थी। वे उसे देश के बच्चों को देना चाहते थे। 1961 में वे राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी) की कार्यकारी समिति के सदस्य बने। परिषद के प्रो. ए. एन. माहेश्वरी लिखते हैं, **"यह बता पाना मुश्किल है कि परिषद की कौन-सी योजना व कार्यक्रम में डॉ. कोठारी ने कितना योगदान दिया। कभी प्रत्यक्ष तो कभी कोठारी आयोग की रिपोर्ट द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से उन्होंने सदा ही परिषद को मार्गदर्शन दिया।"**

डॉ. कोठारी ने स्कूली शिक्षा की इस महत्त्वपूर्ण संस्था के प्रत्येक कार्यक्रम को मूल्यपरक बनाने पर हमेशा जोर दिया। **'राष्ट्रीय विज्ञान प्रतिभा खोज स्कीम'** के तहत देशभर के प्रतिभावान विद्यार्थियों की उच्च विज्ञान शिक्षा जारी रखने के लिए 350 छात्रवृत्तियों की शुरुआत की गई। इस योजना के प्रारंभिक वर्षों में वे स्वयं छात्र-छात्राओं के साक्षात्कार में उपस्थित रहते और शिक्षकों व विद्यार्थियों का उत्साह बढ़ाते।

डॉ. कोठारी की देखरेख में विज्ञान के स्कूली अध्यापकों का ग्रीष्मकालीन सत्र चलाया गया। कुछ अध्यापकों को विज्ञान शिक्षा में प्रशिक्षण लेने अमेरिका भेजा गया।

स्कूली बच्चों को देश में हो रही विज्ञान व तकनीकी की प्रगति से अवगत कराने के लिए उन्होंने **राष्ट्रीय विज्ञान प्रदर्शनियों** का आयोजन करवाया। यह प्रदर्शनी पंडित जवाहरलाल नेहरू की जयंती, 14 नवंबर को आयोजित होती थी। इसमें देश की कई विज्ञान संस्थाएं उत्साह से भाग लेती थीं। साथ ही बच्चे भी अपने मॉडल, चार्ट्स आदि का प्रदर्शन करते थे।



बच्चों की विज्ञान प्रदर्शनी में राष्ट्रपति श्री वी.वी. गिरि के साथ।

सैकेंडरी स्कूल के विद्यार्थियों व शिक्षकों के लिए **"स्कूल साइंस"** नामक पत्रिका एन.सी.ई.आर.टी द्वारा शुरू की गई। राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इसकी व्यापक सराहना की गई।

डॉ. कोठारी ने देश के जाने-माने वैज्ञानिकों, शिक्षाविदों, डॉक्टरों, गणितज्ञों, विचारकों आदि को प्रेरित किया कि वे बच्चों के लिए सामान्य ज्ञान- विज्ञान पर विशेष पुस्तकें लिखें। एन.सी.ई.आर.टी की इस योजना के तहत कई विद्वानों ने उत्साह से अपना योगदान दिया और कई विलक्षण पुस्तकें विभिन्न विषयों पर रोचक ढंग से लिखी गई।

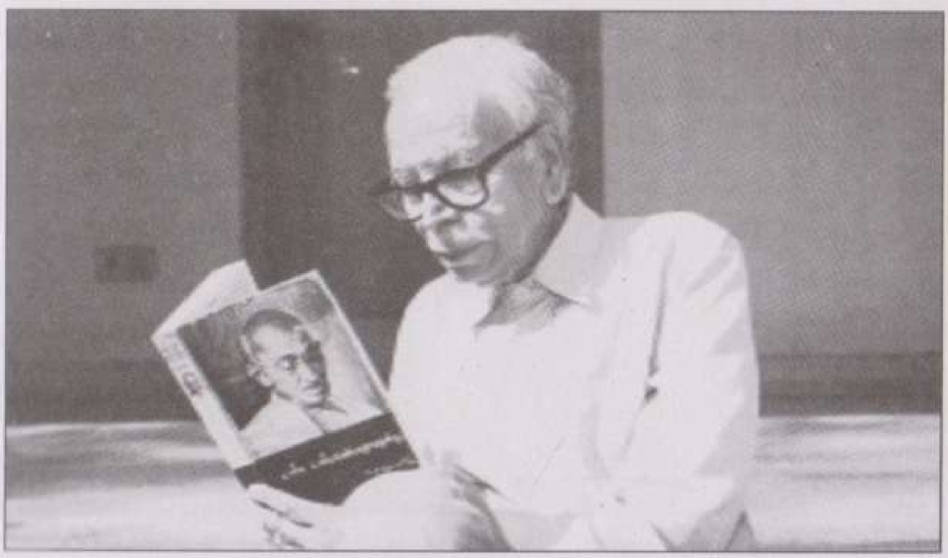


विद्यार्थियों के लिए गांधी साहित्य

गांधीजी के जीवन संदेश से दादाजी बहुत प्रभावित थे। नई पीढ़ी को इससे लाभान्वित करने की उनकी बहुत इच्छा थी।

1977 में दादाजी ने **''विज्ञान और धर्म पर कुछ विचार''** विषय पर एक व्याख्यान श्री राजकृष्ण जैन मेमोरियल व्याख्यान माला के तहत दिल्ली विश्वविद्यालय में दिया। इस व्याख्यान के लिए उन्हें 10,000/- रु. का एक चेक भेंट किया गया। उन्होंने उपकुलपतिजी को संबोधित करते हुए कहा कि इस राशि से कुछ पुस्तकें खरीदी जाएं और विद्यार्थियों व शिक्षकों को एक तिहाई दामों पर उपलब्ध करवाई जाएं। उपकुलपतिजी ने प्रेरित होकर 10,000/- रु. की राशि विश्वविद्यालय की ओर से और मिला दी। गांधीजी की आत्मकथा, गांधी साहित्य, गीता, उपनिषद्, श्री अरविंद साहित्य आदि पर पुस्तकें खरीदी गईं, जिनका लाभ कई विद्यार्थियों व शिक्षकों ने उठाया।

इस घटना के बाद उन्होंने कई बार रियायती दामों पर विद्यार्थियों को पुस्तकें उपलब्ध करवाई थीं।



गांधीजी की आत्मकथा पढ़ते हुए।



मेरा मकसद

दादाजी के जीवन से जुड़ी घटनाओं को लिखने का मेरा मकसद अपने दादाजी को महिमा मंडित करने का नहीं है, क्योंकि वे ऐसा कभी भी नहीं चाहते थे; बल्कि यह बताना है कि घर के बड़े लोगों का आचरण, उनका व्यवहार, उनका संवाद एवं विचार कैसे नई कोपलों को संस्कारित करते हैं। किस हद तक हम उनके विचार आत्मसात कर पाए हैं, यह तो आत्मावलोकन का विषय है; लेकिन विज्ञान की यह बात प्रत्यक्ष प्रमाणित हो जाती है कि जीन्स का प्रसार पीढ़ी-दर-पीढ़ी होता है, क्योंकि दादाजी की



अपने पुत्र प्रो. लक्षमण, पौत्र डॉ. रंजन एवं प्रप्रौत्र अंकुर के साथ।
अपने अस्सीवें जन्मदिवस पर।



परिवार के बच्चों के साथ।

माता, बडी धाईजी, जो लगभग 32 वर्ष की अल्पायु में विधवा हुईं और सारी उम्र काले कपड़े पहने, ने अकेले ही संयम, परिश्रम, स्वाभिमान, समझदारी और दृढ़ इच्छाशक्ति के बल पर अपने चारों पुत्रों को जीवन के उच्चतम मूल्यों से संस्कारित किया। साथ ही धर्म की यह बात भी प्रमाणित हो जाती है कि पूर्वजों के पुण्य कर्मों के प्रताप का लाभ आने वाली पीढ़ियों को मिलता है। मेरे दादाजी व उनके तीन भाइयों का बचपन सुनहरा तो नहीं था, लेकिन उन्होंने हमारा बचपन सुहावना व सुनहरा अवश्य बना दिया।



दो व्यक्ति

यूं तो मुझे परिवार के सभी बड़ों, बुजुर्गों का स्नेह व आशीर्वाद हमेशा प्राप्त हुआ, लेकिन मेरे जीवन में दो व्यक्तियों के व्यक्तित्व ने गहरी छाप छोड़ी है। एक दादाजी और दूसरे मेरे मामाजी श्री महावीर चंद भंडारी। एक ज्ञान का गागर था, तो दूसरा प्रेम का सागर। मामाजी की उपस्थिति आह्लादित करने वाली थी। सार्वभौम प्रेम की सौगात संसार में बहुत कम व्यक्तियों को उपलब्ध होती है। यह चमत्कृत करने वाला तथ्य है कि जो भी उनके संपर्क में आया, उसे ऐसा लगा कि वह उनका अति घनिष्ठ है। समय के अभाव वाली दुनिया में उनके पास बच्चे, बूढ़े सबके लिए जमाने भर का समय था। वे राजस्थान हाईकोर्ट, जोधपुर में वकालत करते थे। उनके घनिष्ठ मित्रों में शिक्षक, वैज्ञानिक, डॉक्टर, वकील, स्वतंत्रता सेनानी आदि सभी थे। अपार आतिथ्य सत्कार के धनी, वे पलभर में सबका मन जीत लेते थे।

1जून 1990 को श्री महावीर चंद भंडारी का असामायिक देहांत हो गया। दादाजी ने भक्ताम्भर स्त्रोत के अंतिम पृष्ठ पर यह लिखा है, ''भगवान कृष्ण को जिस प्रकार के भक्त प्रिय थे, महावीर चंद भंडारी का व्यक्तित्व उन भक्तों की तरह का था।'' आइंस्टाइन द्वारा भेजे गए संदेश का उद्धरण देते हुए दादाजी लिखते हैं, **''अच्छी संगति रखो, इस बात का तात्पर्य यह है कि महावीर चंद भंडारी जैसे व्यक्तियों की संगति की सभी को तलाश रहे। ऐसे व्यक्ति बड़े प्रेरणास्पद और विरले होते हैं। महावीर चंद भंडारी ने अपने सामर्थ्य के अनुसार भौतिक, मानसिक व आध्यात्मिक तीनों यथार्थों को संपूरकता में जिया।''**

दादाजी व्यक्ति को उसकी गहराइयों तक पहचान लेते थे। मामाजी के साथ वे जिस संगत की बात कर रहे थे; वह ऐसे व्यक्ति की थी, जो सब कुछ भोगते हुए भी एक क्षण में सब छोड़ सकते थे, जिनका मन निर्मल था और जो सबको एक दृष्टि से देख सकने में सक्षम थे, जो सब ओर प्रेम बिखेरते थे। मामाजी इस यात्रा में बहुत दूरी तय कर चुके थे। *दादाजी और मामाजी दोनों ही आत्माओं का पलायन अपने ही घर में सबके बीच, लेकिन अंत समय में एकदम एकांत में शांत और तरंगविहीन रहा।*



सधी हुई दिनचर्या

दादाजी का प्रारंभिक जीवन झीलों की नगरी उदयपुर में बीता था। वे रोज सुबह जल्दी उठकर लगभग तीन किलोमीटर पैदल चलकर अपने दादा, पिता व भाइयों के साथ नहाने-धोने के लिए फतहसागर जाया करते थे। पैदल चलने की उनकी आदत बचपन में ही पड़ गई थी। 1934 में जब वे दिल्ली आए, तो कमीश्नर लेन के एक किराए के घर में रहने लगे। विश्वविद्यालय लगभग ढाई कि.मी. की दूरी पर था। वे पहाड़ी (रिज) के रास्ते रोज आया-जाया करते थे। अकसर उनके साथ शिक्षक या छात्र होते थे, जो घूमते हुए विज्ञान पर चर्चा करते थे और इसी भ्रमणकाल के दौरान कई बार विज्ञान के पर्चों की रूपरेखा तैयार हो जाती थी। यहीं पर गुरु-शिष्यों के बीच घनिष्ठता के सुअवसर भी सुलभ हुए थे।

दिल्ली में दफ्तर से लौटते समय इंडिया गेट पर गाड़ी रोक कर लंबी चहलकदमी करना उनका रोजाना का नियम था। मुझे याद है, गर्मी की छुट्टियों में हमें घर से बुला लिया जाता और सब बच्चों को आईसक्रीम खाने को मिलती थी। उदयपुर प्रवास के दौरान वे पैदल अपने मित्रों के साथ फतहसागर की सैर पर जाते थे। उम्र के आखिरी पड़ाव में वे हमें निकट के पार्क में ले जाते थे। हमारी बांह पकड़कर घूमते हुए बातें करते थे। किस्से-कहानियां सुनाते-सुनाते अचानक रुक जाते और गंभीर सोच में पड़ जाते थे।

प्रातःकाल दादाजी सिर, चेहरे व गर्दन की मालिश भी किया करते थे। दिनभर में कई बार वे चेहरा धोते व आंखों पर पानी छींटते थे। वे प्रातः 9:00 बजे तक मौन रखते थे। इस दौरान वे जल्दी उठकर माला फेरते, ध्यान करते व स्वाध्याय किया करते थे। जब कभी सुबह 6.00 बजे की हवाई यात्रा होती, तो दादाजी व दादीजी प्रातः 3.30 बजे उठ जाते। सब नियमपूर्वक पूरा करके ही घर से प्रस्थान करते थे।

दादाजी की दिनचर्या सहज ही सधी हुई थी। मैंने उनको शारीरिक रूप से कभी अस्वस्थ होते हुए नहीं देखा। वे जीवन भर कभी अस्पताल में भर्ती नहीं हुए। केवल थोड़ा ब्लडप्रेशर रहता था, वह भी कुछ जैनेटिक कारणों से, जिसे वे खानपान में फेरबदल करके पूरी तरह नियंत्रण में कर लेते थे। *आंवले, नीम की पत्तियां, हरड़,*




अपनी पत्नी श्रीमती सुजान कंवर के साथ।

त्रिफला, इसबगोल, पीपरमिन्ट और विक्स उनकी दवाइयां थीं। दादीजी मधुर स्वर में भजन गाती थीं। उनके गाए भजन दादाजी को अपार सुकून एवं स्वास्थ्य प्रदान करते थे। अस्वाद के कई प्रयोग वे हमेशा करते रहते थे। नियम से वक्त पर खाना और हमेशा मिताहारी रहना उनके लंबे स्वस्थ जीवन का कारण था।

कई मित्र उनके लिए देश-विदेश से शाकाहारी चीज, जैम, मुरब्बे, शहद, बादाम आदि व हेल्थ फूड की कई दालें, दलिया आदि लाते थे। दादाजी बड़े शौक से प्रसाद स्वरूप उनका सेवन करते थे। अरविंद आश्रम, दिल्ली के बने बिस्किट उनके व दादीजी की शाम की चाय के साथ नाश्ते का पसंदीदा हिस्सा होते थे।

मैंने एक बार आई.आई.टी. के कुछ लोगों को उनसे उनके स्वास्थ्य के बारे में बातें करते हुए सुना। उनमें से एक महिला कह रही थीं, ''डॉक्टर साहब'' आपकी चमड़ी में कितनी चमक है।'' उस वक्त उनकी उम्र 80 वर्ष से ऊपर थी। अंतरात्मा की रोशनी आलोकित हो उठी थी।



गीता सत्संग

यदि कोई व्यक्ति प्रतिदिन गीता या उसी के समकक्ष किसी परम कृति को पढ़कर कार्य पर निकले तो यह असंभव है कि वह कर्म की गहन गति को विस्मृत कर कोई गलत कदम उठाएगा। दादाजी का यह नित्य पाठ प्रातः नहा-धोकर ड्रॉइंगरूम में होता था। एक छोटे पुस्तक स्टैंड पर गीता खुली होती थी। पास ही दो अगरबत्तियां जला लेते थे। कुर्ता-पजामा पहन कर अर्द्ध पद्मासन में ध्वनि के साथ वे गीता पढ़ते थे। लगभग आधा घंटा, फिर नाश्ता और तैयार होकर दफ्तर। यह क्रम कभी भी नहीं टूटा। पहली गीता जो उन्होंने पढ़ी, वह श्रीमती एनी बेसेंट द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित छोटी-सी पॉकेट बुक थी। इसे वे अपने साथ कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय, इंग्लैंड भी ले गए थे।

यू.जी.सी. (विश्वविद्यालय अनुदान आयोग) का कार्यकाल पूरा होने पर 1974 में वे और दादीजी उदयपुर रहने आ गए। मुझे याद है, दादाजी व दादीजी की दिनचर्या बहुत व्यवस्थित व नियमित थी। उनका जीवन अत्यंत सादगीपूर्ण था। वे दिनभर अध्ययन, चिंतन, मनन में व्यस्त रहते थे। एक तरफ गीता, उपनिषद आदि रखी होती थी तो दूसरी ओर विज्ञान, भौतिकी व शिक्षा की पुस्तकें, देशी-विदेशी पत्रिकाएं एवं पर्चे। उनके उदयपुर पहुंचते ही बहुत-से लोग उनसे मिलने आते। शाम 4.00 बजे बरामदे में दरी पर बैठक लगती। यहीं से गीता सत्संग की शुरुआत हुई, जो जीवनपर्यन्त चलती रही। सत्संग के बाद वे सभी फतहसागर की ओर टहलने निकल जाते थे।

तब मैं विद्याभवन स्कूल में पढ़ती थी, जो हिंदी माध्यम का बेहतरीन विद्यालय है। इन्हीं दिनों उन्हें हिंदी सीखने की जरूरत महसूस हुई। बचपन में दादाजी ने फारसी पढ़ी थी। हिंदी का ज्ञान उन्हें कम ही था। यूं वे हिंदी में दीक्षांत समारोह आदि अवसरों पर भाषण दे चुके थे, परंतु इस बार हिंदी सीखने के मायने भिन्न थे। उन्होंने हिंदी शब्दकोश मंगवाए। मुझ से उसके प्रथम पृष्ठ पर पूर्ण वर्णमाला लिखवाई और पढ़ते वक्त वे अकसर हमें बुलाकर किसी शब्द को लिखने का तरीका पूछते थे।

मुझे आश्चर्य होता था, जब मैं उन्हें संस्कृत के श्लोकों को विज्ञान के फॉर्मूलों की तरह तोड़-तोड़ कर उसे समझने का प्रयत्न करते हुए देखती थी। बहुत बाद में समझ आया कि संस्कृत वर्णों, अक्षरों व शब्दों की शक्ति क्या है? *उनके हस्तलिखित पन्ने अध्यात्म और विज्ञान की गहराइयों में डूबे किसी अन्वेषी की अद्वितीय ज्ञानपिपासा को दर्शाते हैं।*



राजघाट

दिल्ली विश्वविद्यालय उत्तरी दिल्ली में स्थित है, अन्य अधिकांश संस्थान दक्षिण दिल्ली की ओर स्थित हैं। दादाजी ने अपना अधिकांश जीवन दिल्ली विश्वविद्यालय परिसर में ही बिताया। जब भी किसी संस्थान में जाना होता, तो रिंग रोड का रास्ता लेना पड़ता था और महात्मा गांधी का समाधि स्थल, 'राजघाट' मार्ग में ही पड़ता था। गुजरती गाड़ी में से **जैसे ही राजघाट आता, दादाजी के दोनों हाथ नमन की मुद्रा में जुड़ जाते और शीश झुक जाता था।** मैंने उन्हें ऐसा करते हुए कई बार देखा था; क्योंकि पास ही बैठ कर मैंने कई बार उनके साथ यात्रा की थी। लौटते में वे कभी-कभी राजघाट उतरते थे। फिर वे समाधि का चक्कर लगाते और कुछ देर ठहर कर विचारों में डूबे पुनः गाड़ी में बैठ कर रवाना हो जाते।

मुझे याद है कि बचपन में परिवार के किसी भी सदस्य की दिल्ली यात्रा बिना राजघाट गए पूरी नहीं होती थी। काला चमकता पत्थर, अमर ज्योति, चारों ओर शिलाओं पर लेखन, ईको की ध्वनि का खेल और बाहर लंबे लॉन में दौड़ लगाना स्मृतियों में बसा है।

ऐसा कहते हैं, यूजीसी व रक्षा मंत्रालय से लौटते हुए वे अकसर यहां आ जाया करते थे। कुछ समय घूमकर शारीरिक और आध्यात्मिक ऊर्जा पाकर लौट जाते थे। गांधी स्मृति, गांधी शांति प्रतिष्ठान, बिड़ला हाउस, 30 जनवरी मार्ग आदि जगहों पर हमें साथ ले जाने में उन्हें विशेष आत्मिक आनंद मिलता था।



तीन बातें

शिक्षा के दौरान छात्र-छात्राएं कई बार स्वयं को चौराहे पर पाते हैं। कौन-सा कॉलेज, कौन-सा कोर्स, कौन-से गाइड आदि दुविधाएं लंबी अनिश्चितता की स्थिति में डाल देती हैं। ऐसे ही एक अवसर पर मैंने दादाजी से पूछा कि एम.एससी. के बाद क्या करना चाहिए, कुछ समझ में नहीं आ रहा। समझाते हुए उन्होंने कहा, **''यह तो बड़ा आसान है। आज के युग में यदि इन तीन बातों में से तुम्हें एक भी मिल जाए तो निर्णय ले लेना चाहिए। i) श्रेष्ठ या उत्कृष्ट कार्य, ii) श्रेष्ठ संस्थान तथा iii) श्रेष्ठ व्यक्ति जिसके साथ कार्य करने को मिले।''** कहने लगे, ''मुझे सौभाग्य से तीनों ही बातें मिली। खगोल विज्ञान में अग्रणी कार्य, केविन्डिश प्रयोगशाला कैम्ब्रिज, इग्लैंड का संस्थान तथा प्रो. मेघनाद साहा व लॉर्ड रदरफोर्ड के साथ काम करने का मौका।''

यह अद्‌भुत संयोग ही उत्कृष्ट इंसानों को बनाने में मददगार होता है। दादाजी इस बात पर जोर देते थे कि जीवन में प्रत्येक कार्य की दिशा उत्कृष्टता की ओर होनी चाहिए।



जीवन का लक्ष्य

एक बार मेरे कॉलेज के वर्षों में दादाजी ने पूछा, "**तुम्हारे जीवन का लक्ष्य क्या है?**" सहसा पूछे गए इस प्रश्न ने मुझे सोच में डाल दिया और मुझे इसका कोई उत्तर सूझा ही नहीं। तब उन्होंने गांधीजी की आत्मकथा 'सत्य के प्रयोग' मंगवाई और प्रस्तावना पढ़ने को कहा। अकसर ऐसा होता था कि जो बात दादाजी हमसे कहना चाहते थे, वह किसी किताब में से जोर से पढ़ने को कहते थे, जिससे सभी सुन सकें। 'प्रस्तावना' के इन वाक्यों का अंग्रेजी से हिंदी में यह अनुवाद मेरा अपना है।

"मैं क्या प्राप्त करना चाहता हूं, मैं जिसके लिए पिछले तीस वर्षों से आतुर और प्रयत्नशील हूं, वह है आत्म साक्षात्कार, ईश्वर को प्रत्यक्ष देख सकना, मोक्ष की प्राप्ति। मैं इसी लक्ष्य के लिए जीता हूं, गतिमान हूं और मेरा संपूर्ण अस्तित्व इसी ओर है। मैं जो भी बोलने और लिखने के माध्यम से करता हूं और जो तमाम कार्य राजनीतिक क्षेत्र के हैं, वे सब इसी अंतिम लक्ष्य की ओर संकेत करते हैं। और मेरा यह लगातार विश्वास रहा है कि जो एक के लिए संभव है, वह सबके लिए संभव है।"



पुस्तकें ही हमारी सद्गुरु हैं

सामान्यतः भारतीय सभी धर्मों के प्रति बड़ा सहिष्णुता व आदर का भाव रखते हैं। यही कारण है कि किसी भी भारतीय पारंपरिक घर में विभिन्न धर्मों की पुस्तकें, चित्र आदि अवश्य ही मिलेंगे। हमारा घर भी इससे अछूता नहीं रहा। मैंने बचपन से ही दादाजी को विज्ञान के साथ सभी धर्मों की किताबों के बीच ही देखा था। बचपन से ही अप्रत्यक्ष रूप से हुए इस परिचय ने हमें मानवता की इस अमूल्य निधि के निकट ला दिया।

गांधीजी की आत्मकथा, विनोबा का गीता प्रवचन, रामकृष्ण परमहंस की जीवनी, बुद्ध के कथन, ईशावास्य उपनिषद, समण सुत्तम, अनपूरबी, भक्ताम्बर स्त्रोत, महर्षि अरविंद की गीता व उपनिषद् आदि तो हमेशा उनके साथ ही रहते थे। कुछ लोग जब यह पूछते कि आजकल इतनी पुस्तके छप रही हैं, किस-किस को पढ़ें? इस पर दादाजी कहते, **''मौलिक कृतियों को पढ़ो। अब जब सद्गुरु का मिलना मुश्किल है, तब ये किताबें ही हमारी सद्गुरु हैं।''**



हम राणा प्रताप की धरती से हैं

मेरी स्कूल की पढ़ाई विद्याभवन, उदयपुर में हुई। भौतिकशास्त्र में आगे की पढाई के लिए मैंने मिराण्डा हाउस, दिल्ली विश्वविद्यालय में दाखिला लिया। घर से पहली बार बाहर निकलना हर एक के लिए बहुत कठिन होता है, परंतु अयोध्या सिंह उपाध्याय की कविता 'एक बूंद' की अंतिम पक्तियां याद करके हिम्मत बंधी रही।

"लोग यों ही हैं झिझकते सोचते,
जबकि उनको छोड़ना पड़ता है घर।
किंतु घर का छोड़ना अकसर उन्हें
बूदं लौ कुछ और ही देता है कर।"

लेकिन एक वर्ष बीतने पर गर्मी की छुट्टियों में मैंने अपना सारा सामान बांधा और इस इरादे से उदयपुर गई कि अब दिल्ली लौटना नहीं होगा। यह बात जब मैंने दादाजी को बताई तो वे सोच में पड़ गए। फिर बोले, **"हम राणाप्रताप की धरती से हैं, उन जैसे वीरों ने कभी हार नहीं मानी, कभी पीछे मुड़ कर नहीं देखा। एक बार अगर तुमने अपने कदम पीछे ले लिए तो जिंदगी भर पीछे हटना पड़ेगा। राणाप्रताप को याद कर आगे बढ़ना है।"**

मैंने दिल्ली से ग्रेजुएशन, पोस्ट ग्रेजुएशन तथा विद्यावाचस्पति यानी डॉक्टरेट की पढ़ाई भी की। और अब तक कभी अपने निर्णयों को भय या आशंका की वजह से न कभी बदला, न वापस लिया।

जीवन की शिक्षा किसी एक रोल मॉडल की नकल करने में नहीं, बल्कि अपने अस्तित्व की अद्वितीयता को बनाए रखते हुए औरों के जीवन से सीख लेने में है।



भगवान महावीर का नाम

मेरी पड़दादीजी श्रीमती लहरबाई कोठारी के देहांत के बाद हमारा पुश्तैनी चार मंजिला मकान जो पंचायती नौहरा, उदयपुर में था, पूरी तरह से खाली हो गया। कई दशकों तक यूं ही कुछ लोग उसमें रहते रहे। चारों बेटों में कोई विवाद तो था नहीं और छोटे भाइयों की बड़े भाई में गहरी आस्था थी। इसलिए कई वर्ष यूं ही निकल गए। दादाजी उसे अपने एक छोटे भाई को दे देना चाहते थे, परंतु लेने वाले के लिए यह दुविधा बन सकता था। इसलिए उस मकान को बेच दिया गया। पूरा टैक्स देकर एक लाख रू की रकम आई, जिसे अंत में चारों भाइयों ने बांट लिया। इससे पहले यह भी सुझाव आया था कि अपनी माता जी के नाम पर एक ट्रस्ट बनाया जाए और यह पैसा उनके नाम से कल्याणार्थ दिया जाए। मेरी दादीजी ने इस सुझाव की जोरदार वकालत की, लेकिन दादाजी ने यह कहते हुए इसे खारिज कर दिया, **''जितना दान देना है श्रद्धा से दो, लेकिन किसी व्यक्ति के नाम पर दान देना बिल्कुल व्यर्थ है। महावीर स्वामी के अलावा किसका नाम शेष बचा है।''**



अणुव्रतों की पालना

दादाजी व दादीजी जैन साधु-साध्वियों के दर्शनों को अकसर जाते थे। एक आस्थावान श्रावक के रूप में दोनों को आचार्यों के सान्निध्य में शांत भाव से बैठे हुए देखना बहुत सुखद था। हमें वे अकसर साथ ले जाया करते थे। आचार्यों के व्याख्यानों को सुनना व अन्य जैन कार्यक्रमों में भाग लेना दादाजी जैसे व्यस्त वैज्ञानिक के लिए एकदम सहज था। वे जब मौका मिलता, मंदिर भी जाते थे। धार्मिक स्थलों पर परिवार के सदस्य हमेशा साथ रहते थे, लेकिन किसी तिथि विशेष, त्यौहार या धार्मिक दिनों पर इन धर्म स्थलों में जाना कभी आवश्यक नहीं बना।

महाव्रत साधु संतों के लिए हैं और अणुव्रत श्रावकों के लिए हैं। धर्म के नाम पर छोटे-छोटे नियमों के पालन की प्रेरणा बचपन से ही हम सभी को मिली। ये नियम तर्कसंगत हैं और भावनाप्रेरक भी। जैसे—सच बोलना, जानवरों को कष्ट न पहुंचाना, पेड़-पौधों, फूलों आदि को न तोड़ना, सभी का आदर करना, झूठा न डालना, पानी का



एक जैन सम्मेलन में।

उपयोग ध्यान से करना, सादगीपूर्ण रहना, स्कूल से चाक आदि नहीं उठाना, किसी का सामान नही चुराना, सुबह उठते समय व रात को सोते समय नवकार मंत्र का जाप करना, मिल-जुल कर खेलना, आदि इस तरह के नियम दादीजी द्वारा समझाए जाते थे। इन्हें कैसे पालना है, यह वे समय-समय पर बताती रहती थीं। पास बैठे दादाजी अकसर सुना करते थे और मन ही मन प्रसन्न होते थे, लेकिन कहते कुछ नहीं थे। वे तो हमेशा वही करते थे, जिसकी वे हमसे अपेक्षा रखते थे।



सच बोलना व कहना मानना

बहुत छोटेपन में ही हमें दादाजी-दादीजी ने बताया था कि बच्चों का धर्म है, "सच बोलना व कहना मानना"। आज तीस बरस के बाद यह अच्छी तरह समझ में आ गया है कि सच बोलना कितना सहज व आसान है। एक झूठ जीवन भर की पीड़ा का कारण बन सकता है। यह आश्चर्यजनक लग सकता है, क्योंकि आजकल लोग हर छोटी बात पर झूठ ऐसे बोलते हैं, जैसे कुछ हुआ ही न हो। एक व्यक्ति दिन में औसतन 4-5 बार झूठ बोल लेता है। वाणी का अंसयमित होना समाज के लिए अति दुर्भाग्यपूर्ण है।

'कहना मानना', स्वानुशासन की बात है; अंधानुगमन या मिलिट्री शासन की नहीं। हमारे घर में विचारों के खुलेपन के साथ अपनी राय व्यक्त करने तथा ज्ञान-विज्ञान संबंधी विषयों पर खुली चर्चाएं करना एक आम बात रही है। दादाजी जब व्याख्यान देकर लौटते तो अपेक्षा रखते थे कि जो भी उनके साथ गया था, वह अपनी राय व्यक्त करे। खाने की मेज पर हम बच्चे उनके हाव-भाव, कपड़े आदि पर सीधी आलोचना करते और बड़े उनके विषय व विचारों पर। नियम स्पष्ट था, *आलोचना उन्मुक्त हो, लेकिन मर्यादा का ध्यान रखा जाए।* यह नियम बताया नहीं गया था, लेकिन स्वतः समझ में आ गया था। प्रश्न करने की पूरी स्वतंत्रता और बड़ों के प्रति मर्यादा पालन ने हमें 'कहना मानने' वाले धर्म को निभाने में पूरा सहयोग दिया। इसलिए घर में बच्चों को मारना तो दूर, डांटना तक पूर्ण रूप से निषिद्ध था या यूं कहिए कि इसकी कभी आवश्यकता ही नहीं पड़ी।

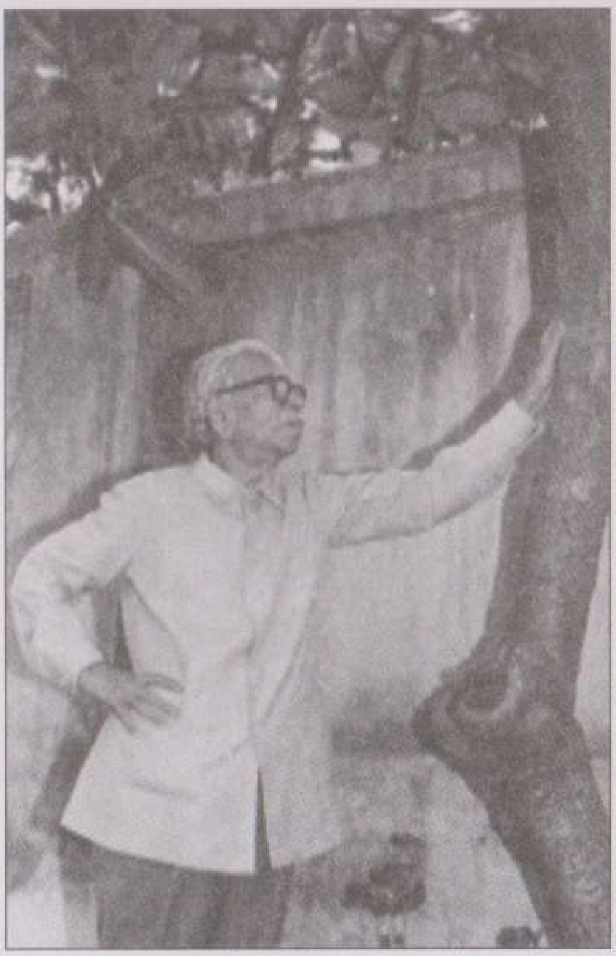


सच्ची जैन श्राविका
श्रीमती सुजान कंवर कोठारी।



अहिंसा का पहला पाठ

"पेड़-पौधों में हमारी ही तरह जीवन है। कष्ट पहुंचाने पर उन्हें वैसा ही दर्द होता है, जैसे कि हमें"। पर्यावरण सजगता की पहली शिक्षा हमें बहुत बचपन में दादीजी से मिली थी। घर में बगीचे होने के बावजूद कभी फूल नहीं तोड़े गए, कभी पेड़ों को नुकसान नहीं पहुंचाया गया। जानवरों के प्रति सद्‌भाव देखा। उन्हें दुत्कारना या चोट पहुंचाना असंभव था, क्योंकि बगीचे में घूमते जंगली कुत्तों के भी नाम मोती जैन आदि रखे गए थे। घर में काम करने वालों में दो युवक थे। दादाजी छोटे को छोटे साहब और बड़े को बड़े साहब कह कर बुलाते थे। यह सुनकर हमें तो बड़ा मजा आता था, लेकिन साथ ही सबका आदर करना भी हमने सीख लिया था।



अहिंसा दादाजी के जीवन के केंद्र में रही। मन, वचन और काया से अहिंसा का पालन करना उन्होंने बचपन में अपनी माता से सीखा था और जीवनपर्यंत उसे निभाने की भरसक कोशिश की।



अपरिग्रह

यूनिवर्सिटी का बड़ा घर जब खाली किया गया तो उसका अधिकतर सामान स्कूलों, आश्रमों व पुस्तकालयों में पहुंचाया गया था। *दादाजी-दादीजी ने अपना जीवन दो सूटकेसों व दो बैगों में समेट लिया।* इसके बाद मैंने उन्हें हमेशा इतने से ही सामान के साथ देखा। पुस्तकों, कपड़ों व अन्य चीजों के अलावा, एक थाली, कटोरी, चम्मच, गिलास, चीनी, नेलकटर, मेगनिफाइंग लेंस, लौंग व इलायची की डिब्बी, कैंची, चाकू, मोमबत्ती, माचिस, रस्सी, सुई-धागा, टॉर्च आदि जरूरत की सभी चीजें दो बैगों में समा जाते थे। तब हवाई यात्रा में इन वस्तुओं पर कोई रोक नहीं थी और वे इन संसाधनों के साथ आया-जाया करते थे।

जब भी दादाजी को किसी मीटिंग या समारोह में जाना होता तो वे एक दिन पहले अपनी पूरी ड्रेस पहन कर देख लेते थे और उसे तैयार कर टांग देते थे। उन्हें कभी इस बात से परेशान नहीं होना पड़ा कि आज रूमाल या चश्मा छूट गया है, कोट का बटन टूटा है या पैन में स्याही नहीं भरी है या फिर जूते साफ नहीं हैं। *व्यवस्थित और प्रोडक्टिव जिंदगी अपरिग्रह से ही संभव है।*



पहले डिजर्व करो, फिर डिजायर

दादाजी ने यह कभी भी नहीं कहा कि *पहले डिजायर करो, फिर डिजर्व;* बल्कि यह कहा कि जितना तुम डिजर्व (योग्यता अनुसार प्राप्त) करते हो, उससे कम की अपेक्षा रखो। परिवार में कई बार ऐसे अवसर आए, जब उनकी थोड़ी-सी सिफारिश से काम बन सकता था, परंतु यह बात दादाजी तक पहुंचाना नामुकिन था। *यदि यह नियम जीवन का हो, तो फिर किसी का भी हिस्सा मार लेने की इच्छा ही जाग्रत नहीं होगी।*

उन्हें अणुव्रत का एक लाख रूपये का पुरस्कार पाने की सूचना मिली। उन्होंने यह कह कर उसे लेने से इंकार कर दिया कि अणुव्रतों का पालन करना तो मेरा धर्म है। इसके लिए पुरस्कार कैसा? कुछ लोगों ने तुरंत ही सुझाव दिया कि ठीक है, यह बात अखबार में दे देनी चाहिए। इस पर दादाजी ने कहा, **"यह तो और भी बुरा होगा। पुरस्कार न लेना और फिर उसका ढिंढोरा पीटना! यह तो पुरस्कृत होने के अहंकार से कहीं अधिक है।"**

अणुव्रत समिति को उन्होंने लिखा, "...**ईश्वर हमें शक्ति, श्रद्धा और इतनी समझ दे कि जीवन भर हम इस (अहिंसा पालन) ओर अभ्यासरत रहें।"** आगे लिखा, "...**मैं यह अच्छी तरह जानता हूं कि अनगिनत लोग इस दिशा में मुझसे आगे हैं, विशेषकर माताएं और बहनें।"**



अरे मुझे गुस्सा आ गया

गर्मियों की छुट्टियां हम 5 यूनिवर्सिटी रोड, दिल्ली के बड़े से घर में बिताते थे। इस घर के कमरे बहुत बड़े-बड़े थे। खाने की मेज पर 14 व्यक्ति एक साथ बैठ सकते थे। घर के एक छोर में क्या हो रहा है, दूसरे छोर को पता ही नहीं चलता था। छुपम-छुपाई का खेल हमारा सबसे पसंदीदा खेल था, लेकिन ड्रॉइंग रूम की एक अलमारी में सजाए गए विज्ञान के 'खेल-खिलौने' व उपकरण हमेशा कौतुहल का विषय बने रहते। इन्हें दादाजी को उनकी देश-विदेश की यात्राओं में मित्रों ने भेंट किया था। कुछ उम्र के हिसाब से हमें खेलने को मिल जाया करते थे। एक कांच की नाचने वाली बत्तख पर मेरी नजर पड़ी। दादीजी से इसकी मांग की गई। पहले तो उन्होंने साफ मना कर दिया लेकिन जिद करने पर वह इस शर्त पर मिली कि ध्यानपूर्वक खेलने के बाद तुरंत इसे सुरक्षित लौटा दिया जाएगा।

हमने उस बत्तख के चारों ओर खूब संसार सजाया और उसे पानी में खूब डुबकी लगवाई। तभी अचानक एक विस्फोट-सा हुआ और बत्तख छोटे-छोटे कांच के टुकड़ों में बदल गई। उसमें भरा द्रव हमारे कोमल हाथों को खूब ठंडा करके जला-सा गया। दौड़ कर हमने दादीजी को दुर्घटना स्थल पर बुलाया। अब बत्तख की केवल लाल चोंच शेष बची थी। उन्होंने हमें वहां से चले जाने को कहा और टूटे अवशेष लेकर वे दादाजी के पास पहुंची। सांस रोके, पर्दे के पीछे छिपकर हमने देखा, दादाजी ने बत्तख के अवशेष अपने हाथ में लिए और दीवार पर धमाके से दे मारे। किसी बड़े आदमी के गुस्से से हमारा यह पहला सामना था। हम तो बंदूक की गोली की तरह भाग छूटे। कुछ देर बाद जब गरमाहट कम हुई तो दादीजी बड़े शांत भाव से दादाजी से कहती सुनी गईं, **"यह तो नश्वर था। एक दिन इसे वैसे भी जाना ही था। बच्चों पर गुस्सा करने से क्या लाभ! हमें उन्हें इस सदमें से उबार लेना चाहिए।"** वे चली गईं। करीब घंटे भर बाद दादाजी ने हमें बुलवाया। घबराए हुए, दोषग्रस्त हम दूर खड़े हो गए। उन्होंने पास बुलाकर हाथ थाम कर जैसे स्वयं से कहा, **"अरे मुझे गुस्सा आ गया, ऐसी चीज पर! उसे तो टूटना ही था! किसी चीज के प्रति इतना मोह!"** ...वे स्वयं से बोलते ही गए। फिर कहा, "देखो, मैंने गुस्सा थूक दिया है। अब हम फिर से दोस्त हो गए!"

अचानक आए मूड के इस बदलाव को हम समझ न सके, लेकिन मुझे याद है कि सामने टेबल पर गीता खुली पड़ी थी। वे इस दौरान उसे पढ़ते रहे होंगे, क्योंकि उस दिन के बाद उनकी मृत्यु तक हमने उन्हें अपना आपा खोते फिर कभी नहीं देखा। *हर संकट एवं संशय के समय गीता उनका सहारा बनते देखी थी, जिसे वे हर रात सोने से पहले पढ़कर अपने तकिये के नीचे सरका देते थे।*



अलंकारों के प्रति अनासक्ति

मैंने बचपन से यह सुना था कि दादाजी को पद्मभूषण व पद्मविभूषण मिला है। भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद के साथ उनकी फोटो पद्म पुरस्कार ग्रहण करते हुए यही दर्शाती है; लेकिन जब तक बच्चे प्रत्यक्ष देख न लें, विश्वास नहीं होता। हमने



राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद द्वारा पद्मभूषण प्राप्त करते हुए (1962)।

कई बार जिद की और दादीजी को शिकायत भी की कि हमें वे मैडल क्यों नहीं दिखाए जाते। दादाजी तो बड़ी तरकीब से बात पलट देते थे। कोई किस्सा सुनाने लगते और दादीजी आश्वासन दे देतीं, ''दिखाएंगे! कभी दिखाएंगे''। वह दिन आज तक नहीं आया। हमारे इतने बड़े परिवार में बहुत ही कम व्यक्तियों ने वे मैडल देखे हैं। दादाजी शायद इन सबका सीधा प्रभाव हम पर नहीं पड़ने देना चाहते थे। ऐसा हुआ भी और परिवार के किसी भी सदस्य ने उनके पद और प्रभाव का उपयोग अपने लाभ के लिए नहीं किया। उनका विश्वास था कि अपनी सामर्थ्य से अधिक पाने से कहीं बेहतर है कि सामर्थ्य से कम मिले। वे अकसर कहते थे, **''जितना डिज़र्व करते हो, उससे कम डिज़ायर करो।''**

1962 में गृहमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री जी ने फोन करके दादाजी से अगले दिन मिलने वाले पद्मभूषण की स्वीकृति चाही। दादाजी ने यह कह कर इंकार कर दिया और पक्षी विशेषज्ञ डॉ. सलीम अली, जैन आगमों पर कार्य कर रहे मुनि जिन सूरी जी आदि व्यक्तियों का उदाहरण देते हुए कहा कि **ये पुरस्कार तो उनके लिए हैं, जो स्वतंत्र भारत में अपने स्वाभाविक कार्यों से कहीं आगे बढ़कर कार्य कर रहे हैं।** जब यह बात नेहरू जी को पता चली तो वे बोले ''कोठारी से मत पूछो। मैं उनका स्वभाव जानता हूं।'' 1973 में पद्मविभूषण के लिए कोई फोन नहीं आया।



बच्चों की बड़ी बातें

दादाजी बच्चों के प्रति बहुत संवेदनशील थे। वे अकसर प्रश्न पूछते और बच्चों का नजरिया जानकर प्रसन्न हो जाते; फिर अपनी बात कहते जो बड़े मार्के की होती थी।

लगभग अस्सी वर्ष की उम्र में उन्होंने अपनी तीन-चार वर्षीय प्रपौत्री श्रेया से पूछा, "बताओ तुम्हें सबसे अच्छा कौन लगता है?" चमकती आंखों से उसने सभी पर दृष्टि घुमाई और झट से दादाजी के पैरों पर अपनी अंगुली रख दी और चली गई, लेकिन तभी वह पलटी और तपाक से बोली, **"दादाजी! अगर मैं भूल जाऊं तो आप याद दिला देना।"** दादाजी सोच में पड़ गए और श्रेया से बोले, **"तू मेरी टीचर है।"** फिर कहने लगे, **"ऐसा हम किससे कहते हैं? ईश्वर से ही तो कहते हैं कि अगर मैं भूल जाऊं तो तू राह पर ले आना।"**

एक दिन प्रपौत्र सिद्धांत ने दादाजी की ओर च्यूंइगम बढ़ाई। उन्होंने लेकर उसे पुनः लौटा दी 'और कहा "हां, है तो यह बड़ी स्वादिष्ट, लेकिन मेरे दांतों को यह नुकसान पहुंचाएगी। **यह जरूरी नहीं कि जो हमारी इंद्रियों को अच्छा लगे वह हमारे लिए सही भी हो।"**

पौत्र रंजन अकसर गीता के बारे में सुनता रहता था। तब वह भौतिकशास्त्र पढ़ रहा था। वह दादाजी से गीता के बारे में अकसर पूछा करता और कभी-कभी असंतुष्ट ही रह जाता। एक दिन उसने पूछ लिया, "दादाजी! जब आप विज्ञान की बात करते हो, तो बड़े प्रभावशाली लगते हो; लेकिन जब गीता और धर्म की बात करते हो, तो इतने प्रभावित करते नहीं लगते हो?" दादाजी ने आत्मीयता से इसे स्वीकारते हुए कहा, **"तू सही कह रहा है। मैंने विज्ञान पर जितना चिंतन मनन किया है, उतना धर्म को जीवन में नहीं उतारा। जब तक धर्म जीवन में पूरी तरह नहीं उतरता, तब तक धर्म पर कही गई बातें फ्रॉड ही लगेंगी।"**



संस्कारित हुई पौत्र वधू

दादाजी की पौत्र वधू समीरा ने विवाह के बाद के पहले छः महीने दादाजी के सान्निध्य में बिताए। उन दिनों को याद कर समीरा ने लिखा है, *वे महीने मेरी जिंदगी को पूर्ण रूप से रूपान्तरित करने वाले थे।* दादाजी ने मुझे कुछ उत्कृष्ट साहित्य पढ़ने को प्रेरित किया। पहली पुस्तक जो मैंने पढ़ी, वह थी—'गांधीजी की आत्मकथा'। गीता के श्लोक भी कंठस्थ किए। दादाजी को भजन सुनने का शौक था। शाम को पड़ोस में रहने वाली



नीचे बैठी पौत्रवधु समीरा के साथ।



Page 115 अपनी बेटी-बहुओं के साथ।

दास आंटी (प्रो. दास की पत्नी) भी सत्संग के लिए आ जातीं और भजन सुनातीं। मैं भी उनका साथ देती।'' दादाजी कहते, **''जीवन कुरुक्षेत्र के युद्ध के समान संग्राम है। हमें रणभूमि के लिए स्वयं को एक योद्धा के रूप में तैयार करना चाहिए। योद्धा बनने के लिए बचपन से ही आध्यात्मिक शिक्षा की शुरुआत होना आवश्यक है। बूढ़े होने का इंतजार नहीं करना है। अर्जुन ने भी युवावस्था में ही अपने-आपको तैयार किया था।''**

वे कहते, **''यदि विजय प्राप्त करनी है, तो ईश्वर की तरफ रहो, ईश्वर के मित्र बन जाओ।''** उन्होंने शत्रु को कभी कम नहीं आंका, लेकिन उन्हें भय ने कभी नहीं सताया; क्योंकि दादाजी को मालूम था कि ईश्वर उन्हीं की तरफ हैं।' प्रश्न यह उठता है कि कैसे पता चले कि हम ईश्वर की तरफ हैं कि नहीं, 'फल के द्वारा', वे कहते। दादाजी ने अति सादा जीवन जीया। बड़े-बड़े कार्य उनके जीवन पथ पर आते रहे और उन्हें विजय भी मिलती रही।



जन्मदिन पर कढ़ी-लापसी

हमारे परिवार में छोटे-बड़े सभी का जन्मदिन मनाया जाता है। हर जन्मदिन पर दादाजी गणेशजी की पूजा किया करते थे। दादीजी गणेश वंदना के बाद कुछ जैन भजन व नवकार मंत्र आदि गाया करती थीं। कढ़ी, लापसी बनती थी। इसके बाद जिसका जन्मदिन होता उसे दादाजी, दादीजी आशीर्वाद स्वरूप एक पैकेट भेंट करते। इसमें हमेशा कुछ कॉपियां, पेंसिल, रबर, कभी पेन तथा खूब सारी टॉफियां होती थीं। साथ ही दान के लिए कुछ रूपए व विशेष भेंट। यह सिलसिला उनके रहते हमेशा एक जैसा रहता था, लेकिन फिर भी उत्सव की तरह मनाया जाता। सादगीपूर्ण मनाए गए जन्मदिन की यादें किसी बड़ी पार्टी से कहीं अधिक आनंददायक हैं। *केक लाना व मोमबत्ती बुझाना उन्हें कभी पसंद नहीं था और यह हमारे घर की परंपरा कभी न बन सका।*



स्वाद में क्या रखा है

दादाजी-दादीजी जहां भी रहते भोजन वे हमेशा अपने पोते-पोतियों के साथ ही करते थे। यही समय होता था, जब भोजन करने के बाद वे किस्से-कहानियां भी सुनाते। इन किस्सों के विषय होते– उनकी यात्राएं, वैज्ञानिकों के किस्से, उनके कार्य, धर्म, विज्ञान, शिक्षा संबंधी बातें आदि।

भोजन करते वक्त बच्चे अकसर नखरे करते हैं। कभी यह पसंद तो कभी वह नापसंद। घर की महिलाओं को अकसर इससे जूझना पड़ता है। क्या बनाया जाए, क्या न बनाया जाए। एक दिन जयपुर में कुछ इसी तरह का दृश्य मेज पर चल रहा था। दादाजी ने अचानक एक करेला मंगवाया और कहा कि इसे छिलके समेत चक्कों में काट कर तवे पर थोड़ा भून कर ले आओ। भूना हुआ करेला आते ही उन्होंने उसे खाना शुरू कर दिया। वे खूब स्वाद ले-लेकर खाते गए। हम अचरज भरी निगाहों से देखते रहे। थोड़ी देर में मेरे मुंह में पानी आने लगा। मैंने एक टुकड़ा उठाया और अपने मुंह में डाल दिया। फिर क्या था, मुझे तो कडवाहट से चक्कर आ गया। भाग कर कुल्ला किया और चीनी से मुंह भर लिया। सब हंसने लगे, लेकिन दादाजी का करेला खाना लगातार जारी रहा। बाद में वे अपने-आप से कहने लगे, **"स्वाद में क्या रखा है?"** दादीजी भी बोल पड़ीं, **'उतरियो घाटी, बीयो माटी,'** अर्थात् मुंह के बाद शरीर रूपी घाटी से उतरते ही भोजन मिट्टी हो जाता है। दादाजी ने फिर समझाया कि सब चीजें सेहत के लिए ही बनाई जाती हैं। थोड़ा-थोड़ा सब खाना चाहिए। फिर तो गांधीजी की आत्मकथा पढ़ते हुए पुनः अस्वाद के बारे में और चर्चाएं हुईं।



आदतों का बंधन

बचपन में मुझे दूध पीना बिल्कुल अच्छा नहीं लगता था। बिना बोर्नवीटा के दूध पीना संभव ही नहीं था, जैसा कि आजकल कई शहरी बच्चों की आदत है। जब मैं दिल्ली विश्वविद्यालय पढ़ने गई, तब बोर्नवीटा का डिब्बा साथ लेकर गई। जब वह खत्म हो गया तो अगले दिन मैंने दूध पीने से इंकार कर दिया। इस पर दादाजी ने कहा "कॉलेज में पढ़ना शुरू कर दिया और बोर्नवीटा की गुलाम!" मैंने कहा, "यह मेरी आदत है। इसके बिना दूध अच्छा नहीं लगता!" दादाजी ने आश्चर्य से कहा, "**इतने बड़े संसार के सामने और इतनी बड़ी जिंदगी में एक छोटी-सी चीज की इस तरह गुलाम होना कि इतनी मामूली-सी चीज के बिना हमारा काम ही न चले?**" बोर्नवीटा हमेशा के लिए विदा हो गया। उन दिनों दादाजी ने अपने स्वास्थ्य की स्थिति को बनाए रखने के लिए बहुत-सी चीजों को स्वतः ही छोड़ रखा था। *उस दिन एक नई दृष्टि मिल गई कि छोटी-छोटी चीजों व आदतों के गुलाम बनना बड़ा बंधन का कारण है।*



'रीयल' या 'कजन'

मेरी पड़दादीजी दृढ़ संकल्प वाली, धैर्यवान और स्वाभिमानी थीं। यही गुण उनके चारों पुत्रों में भी आए। चारों ही दृढ़ संकल्प वाले, सत्य भाषी और मिताहारी थे। वे एक-दूसरे का इतना आदर करते थे कि किसी ने भी उनमें विवाद की कोई तरंग उठती हुई नहीं देखी। सरलता ऐसी कि सबसे एकदम घुल-मिल जाते थे। इन्हीं गुणों से चारों भाइयों ने मिलकर अगली पीढ़ी को भी संस्कारित किया।

मेरा भाई डॉ. सिद्धार्थ तब आठवीं कक्षा में पढ़ता था। एक बार कक्षा में कुछ गलती कर बैठा। अध्यापक जी ने उसे खड़ा कर दिया। डांटते हुए बोले, "तुम्हें पता है, तुम्हारे दादाजी कौन हैं?" सिद्धार्थ ने नहीं कहते हुए गर्दन हिला दी। इस पर वे बोल पड़े, "क्या नाम है तुम्हारे दादाजी का?" घबराते हुए सिद्धार्थ ने कहा, "कौन-से दादाजी?" इस अनपेक्षित जबाब से अध्यापक जी को और अधिक गुस्सा आ गया और उन्होंने सिद्धार्थ को झकझोर दिया। इस पर वह बोल पड़ा, **"मेरे चार दादाजी हैं, आप किनके बारे में पूछ रहे हैं?"** लड़के हंस पड़े और अध्यापक ने झुंझलाकर बात वहीं खतम कर दी। घर आकर सिद्धार्थ ने यह किस्सा सबको सुनाते हुए पूछा, "मेरे दादाजी कौन हैं"? तब उसे यही समझाया गया कि तुम्हारे पापा के पापा डॉ. डी. एस. कोठारी हैं और उन्हीं के बारे में तुम्हारे अध्यापक पूछ रहे थे।

आजकल 'रीयल और 'कजन' की खबर बचपन में ही दे दी जाती है। फिर 'वसुदैव कुटुम्बकम्' के भाव को कैसे जाग्रत किया जाएगा?



जूठन की समस्या

बचपन में हम बच्चे भोजन के बाद जूठन बहुत डाल दिया करते थे। इससे सभी परेशान थे। समझाने पर भी बात नहीं बनी। दिक्कत यह थी कि बढ़ती उम्र में भूख भी अधिक लगती है और थोड़ा मांगने पर कुछ अधिक ही परोस दिया जाता था। जरूरत से ज्यादा खाना बच्चों की फितरत में नहीं होता। सो समस्या गंभीर हो गई। हम दादाजी व दादीजी के साथ ही मेज पर भोजन किया करते थे। एक दिन दादाजी ने भोजन के बाद कटोरियों को अंगुलियों से साफ करके चाटना शुरू कर दिया। *फिर उन्होंने प्लेट दोनों हाथों में ली और उसे भी सीधा चाटना शुरू कर दिया। फिर कटोरियों में पानी डाला और उन्हें धोकर पी लिया।* यह तमाशा फटी आंखों से दादीजी देख रही थीं। हम हंस-हंस कर मजा ले रहे थे। फिर क्या था। हमने भी उनकी नकल करना शुरू कर दिया। हमने कटोरियों में पानी भर दिया। कुछ गिरा, कुछ पीया। फिर प्लेटें चाटने लगे। घर में मदद करने वाले भी हंस-हंस कर लोटपोट हो गए। दादीजी भी हंस पड़ी। खूब आनंद आया। यह क्रम दो-चार दिन और चला और भोजन से जूठन गायब हो गई।



वे क्षण बडे निर्णायक हैं

1991 की सर्दियों की बात है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग की ओर से एक कार्यशाला में मैंने भाग लिया। यह "चमत्कारों के पीछे विज्ञान" पर आधारित थी। इसमें कई तरह के चमत्कार दिखाए गए, जिन्हें बाबा, साधु आदि करते हैं और लोगों को मूर्ख बनाकर लूटते हैं व अंधविश्वास फैलाते हैं। इन सभी चमत्कारों की वैज्ञानिक व्याख्या की गई। इन्हीं में से एक चमत्कार *'इंसानों का आग पर चलना'* था। लगभग 4½ फीट लंबी व 2½ फीट चौड़ी जमीन पर पत्थर के कोयले जलाए गए। इन धधकते हुए अंगारों पर नमक छिड़का गया। फिर एक-एक करके इस पर चलकर कुछ व्यक्ति गुजरे। कुछ स्कूल के छात्र भी आग पर चलकर निकल गए। लड़कियों में किसी की हिम्मत न हो सकी। काफी देर बाद सबके उत्साहित करने पर मैंने अंगारों पर चलने का मन बनाया, लेकिन सामने 800-1000 डिग्री सेंटीग्रेड के लाल अंगारे और दूसरी ओर लोगों का उत्तेजित होकर शोर मचाना विचित्र शंका व भय का वातावरण उपस्थित कर रहा था। मैंने डरते हुए उस पर पहला कदम रखा और मेरा पैर बुरी तरह झुलस गया। पीछे हटना मुश्किल था, सो दूसरा कदम बढ़ाया; फिर पहले वाला पैर पुनः रखते हुए बाहर छलांग लगा दी।

भयंकर जलन से हाल बेहाल हो गया। किसी तरह घर पहुंच कर ठंडे बर्फ के पानी से कुछ राहत मिली। रात होते-होते बर्न विभाग के डॉक्टर को बुलवा कर फफोले फोड़कर पानी निकाला गया और घावों पर एक खास फिल्म चिपका दी गई। लगभग एक महीना लगा ठीक होने में। बिस्तर पर बैठे-बैठे मैंने कई लोगों को पत्र लिखे। सबसे पहला पत्र दादाजी व दादीजी को लिखा जो उस समय दिल्ली में थे। दादाजी ने जबाबी पत्र के साथ साइंटिफिक अमेरिकन में छपा एक पर्चा भेजा, जिसमें आग पर चलने वालों पर शोध था। उन्होंने मुझ से उन क्षणों को ठीक से याद करने को कहा जब मैं आग पर पैर रखने ही वाली थी। उन्होंने लिखा, **"वे क्षण बड़े निर्णायक होते हैं। किसी भी कार्य को करने से पूर्व की हमारी मनःस्थिति कार्य के सिद्ध होने में बहुत महत्त्वपूर्ण होती है।"**

मैंने याद किया और पाया कि मेरी स्थिति उस समय बड़ी भयाक्रान्त थी। पसीना

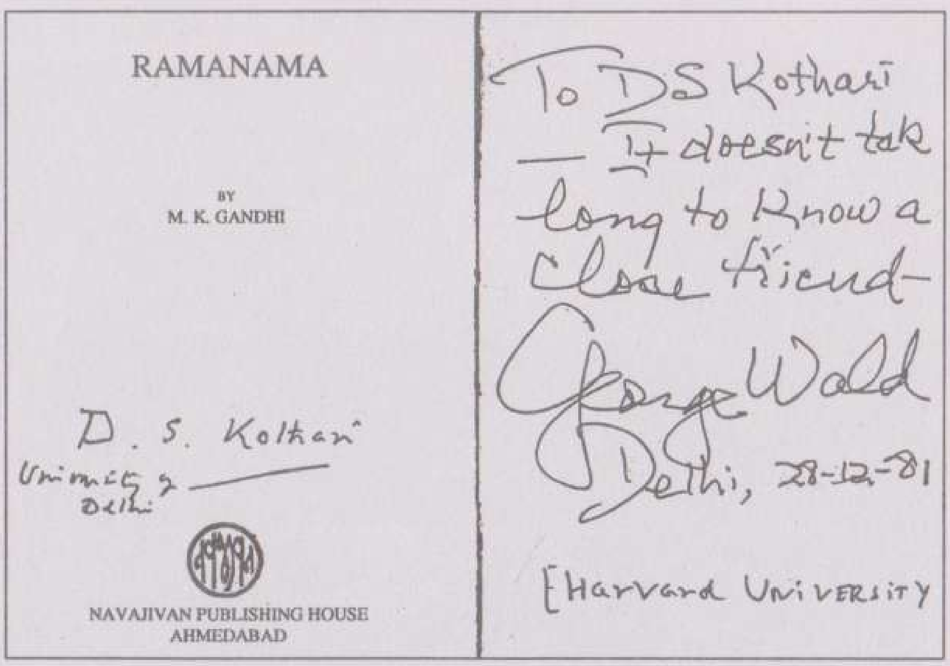
छूट रहा था। आग देख कर जलने के भय से कंपकपी छूट रही थी, लेकिन चारों तरफ लोगों की उत्तेजक आवाजों ने मेरी विवेक शक्ति को अपनी गिरफ्त में ले लिया था। उस वक्त अपनी समझ खो देने के कारण मैंने आग पर चलने का गलत कदम उठा लिया था।

बाद में दादाजी ने बताया कि जो लोग आग पर चलते हैं, उनकी मानसिक स्थिति बड़ी एकाग्र और पूरी तरह नियंत्रित होती है। शरीर मस्तिष्क (माइंड) के अधीन होता है। जबकि मेरी स्थिति बिल्कुल विपरीत थी। मस्तिष्क (माइंड) शरीर के अधीन हो गया था। आग गीली रेत के बीच में लगाई जाती है, जिससे पैर ठंडे व गीले हो जाते हैं और पानी अधिक ऊष्मा को सोख लेता है, लेकिन ऐसा यहां नहीं हुआ। जिन लड़कों के पैर नही जले थे, उनके पैरों की चमड़ी भी अधिक सख्त थी। वैज्ञानिक तथ्य यह है कि लगभग 3 सैकेंड तक आग चमड़ी को जला नहीं सकती। हमारी चमड़ी में पानी होता है जो 3 सैकेंड तक चमड़ी को नुकसान पहुंचाने से रोक सकता है। *दिमाग-शरीर (माइंड-बॉडी) के इस संबंध पर दादाजी का गहरा चिंतन था, जिसे उन्होंने अपने विभिन्न व्याख्यानों के जरिये समझाया है।*



आध्यात्मिक वैज्ञानिक

28 दिसंबर 1981 को डॉ. जॉर्ज वॉल्ड 11.00 बजे हमारे दिल्ली वाले घर में पधारे। दादाजी ने बरामदे में मुड्डे लगवा दिए थे, जहां हल्की धूप आ रही थी। मैंने अपने कैमरे से कुछ तस्वीरें उतारी। डॉ. वॉल्ड ने अपना सारा जीवन इस अध्ययन में लगा दिया था कि *मानव मस्तिष्क जो कि सूक्ष्म तंत्रिका कोशिकाओं का विशाल जंगल है और गहरे अंधेरे डिब्बे में बंद रहता है, कैसे इस त्रिआयामी रंगीन संसार को देख पाता है।* बातचीत का लंबा दौर शुरू हुआ। फिर दोनों इस बात पर सहमत थे कि मानव की महानतम खोजों में से एक यह है कि *जो इंद्रियों को सुखकर महसूस होता है, जरूरी नहीं कि वह मानव के लिए सही व हितकारी हो। सारी अंहिसा, नैतिकता व सामाजिक व्यवस्था इसी बात पर अवलंबित है।* श्री अरविंद की उपनिषद चेतना के सात स्तर, गांधीजी के अध्यात्म प्रयोगों आदि पर बातचीत होने लगी।


RAMANAMA

BY
M. K. GANDHI

D. S. Kothari
University of Delhi

NAVAJIVAN PUBLISHING HOUSE
AHMEDABAD

To DS Kothari
— It doesn't take
long to know a
close friend —
George Wald
Delhi, 28-12-81
[Harvard University

एक अंतरंग मित्र को जानने में देर नहीं लगती।

फिर दादाजी ने गांधीजी की *'रामनाम'* पुस्तिका (अंग्रेजी अनुवाद) डॉ. वॉल्ड को भेंट की। भारतीय अध्यात्म में नाम की महिमा और चिकित्सा में हो रहे आस्था से जुड़े प्रयोगों के बारे में भी बातें हुई। जार्ज वॉल्ड ने रामनाम अपने हाथ में ली और उस पर लिखा, **''एक अंतरंग मित्र को पहचानने में देर नहीं लगती''** और वापस किताब दादाजी को भेंट कर दी।

उस उम्र में ये बातें मेरी समझ से परे थी, लेकिन आज इतने वर्षों बाद उनकी गहराई और विस्तार की अनुभूति होती है। अब यह अहसास होता है कि *किस तरह दो उत्कृष्ट वैज्ञानिक अध्यात्म के सागर में गोता लगाते आनंदित हो रहे थे।*



संवेदनात्मक शोध

दादाजी के मित्रों में देश-विदेश के विख्यात डॉक्टर भी थे, जिनमें से कुछ नोबल पुरस्कार विजेता थे। एक बार अमेरिका के डॉ. जॉर्ज वॉल्ड हमारे घर आए। भोजन से पहले उनकी लंबी बातचीत हुई। अमेरिका के डॉ. जॉर्ज वॉल्ड ने आंख की रोशनी और विटामिन A के बीच के संबंध का पता लगाया था। इसी खोज के लिए उन्हें नोबल पुरस्कार से नवाजा गया था। जब दादाजी ने उनसे पूछा, **''आपने अपने कैरियर में कितने जानवरों का बलिदान दिया होगा।''** कुछ सोचकर डॉ. वॉल्ड बोले **''15-20 चूहों का।''** यह संख्या इतने लंबे कार्यकाल के लिए अविश्वसनीय रूप से बहुत थोड़ी प्रतीत हुई। फिर उन्होंने बताया कि प्रयोगों के लिए जानवर की आंख से द्रव निकालना होता था। यह द्रव वे अपने शिष्यों को बूचड़खाने भेजकर हाल ही में मारे गए जानवरों से निकाल लाने को कहते थे। इस तरह उन्होंने अपने प्रयोग किए, जिसकी बदौलत आंख और विटामिन A के संबंध को समझा जा सका।



नोबल पुरस्कार विजेता प्रो. जॉर्ज वॉल्ड के साथ।

THE HINDUSTAN TIMES

Exempted From Anin



Prime Minister Nehru at the "Atoms for Health" exhibition which he inaugurated in New Delhi on Feb. 9.

Atom As Tremendous Force For Good

´डॉ. कोठारी के प्रयासों से स्कूलों में जानवरों पर प्रयोग पर रोक।

दादाजी डॉक्टरों से जानवरों पर हो रहे प्रयोगों के बारे में अकसर चर्चा करते थे। *यह बात उन्हें परेशान करती थी कि स्कूल के बच्चों से भी जानवरों के डिसेक्शन करवाए जाते हैं।* मेरी बहन व भाई डॉक्टर हैं। बहन ने तो कई डिसेक्शन किए, लेकिन भाई से गोभी का फूल कटना भी मुश्किल था। जब उसने यह बात दादीजी को बताई तो वे बहुत दुःखी हुईं। उन्हें लगा कि डॉक्टर बनने के लिए शायद यह जरूरी होता है। उन्होंने दादाजी से कुछ करने को कहा। तब दादाजी ने उसे तत्काल राहत देने के लिए FRAME नामक पत्रिका दी जो इंग्लैंड से निकलती है और जानवरों पर प्रयोगों के खिलाफ कार्य कर रही है। जब उसने मेडिकल की पढ़ाई शुरू की तो प्रारंभ में ही मेंढ़कों पर मांसपेशियों के संकुचन आदि के प्रयोग करने होते थे। मेंढ़क को पकड़ कर सिर पर डंडे से मारकर उसे बेहोश करना होता था। यह क्रिया उसे इतनी भयानक लगती थी कि उसकी रातों की नींद उड़ जाती, लेकिन उसकी शिक्षा जारी रही। साथ ही जारी रहा दादाजी से संवेदना का संवाद। आज वह एक कुशल नेत्र विशेषज्ञ है। *संवेदनशीलता के साथ कार्य करने की सीख उसे मिल गई* और इधर कई वर्षों से स्कूलों में भी जानवरों पर प्रयोगों को प्रतिबंधित कर दिया गया है।



गुरुजी

दादाजी के पहले पड़पोते अंकुर का जन्म अमेरिका में हुआ। जब वह भारत रहने आया तो दादाजी ने उसे अपना गुरु मान लिया। वे उसे 'गुरुजी' कह कर ही बुलाते थे। उसके क्रियाकलाप और बातें उन्हें आनंदित करती थीं। साथ ही उसकी बाल निर्मलता उन्हें गहरे चिंतन में डाल देती थी। बच्चों से उनका संवाद रोमांचकारी व आनंददायी होता था।

मरिया मोन्टेस्सौरी को उद्धृत करते हुए दादाजी कहते, **''बच्चा इंसान को दी गई ईश्वर की अनमोल भेंट है। वह गिरे हुए इंसानों को स्वर्ग के दरबार में ले जाने के लिए अवतरित होता है।''**

बचपन से ही दादीजी के साथ जुड़ी एक आदत हम सबकी भी बन गई थी। प्रातः उठते ही हम आधी नींद में सबसे पहले दादाजी-दादीजी को धोक (चरणस्पर्श) लगाते थे, लेकिन इससे पहले कि हम उन्हें प्रणाम करें, उनके हाथ पहले जुड़ जाते थे। यह एक प्रतियोगिता जैसा लगता कि कौन पहले हाथ जोड़े। मैंने हर स्थिति में, विभिन्न अवसरों पर, हर स्तर के लोगों के सामने उन्हें पहले हाथ जोड़ते हुए देखा। उनके लिए छोटे-बड़े सभी समान थे। उन्हें तो केवल आत्मा को ही नमन करना होता था। वे कहते थे, **''नमन से विनयशीलता आती है और विनय से विद्या का द्वार खुलता है।''**



सत्यमेव जयते

एक बार स्वतंत्रता दिवस पर उन्होंने हमसे पूछा कि देश के राष्ट्रीय चिह्न के बारे में क्या जानते हो? स्कूल में तब पढ़ाया गया था, सो सबने अपनी बात जोड़ते हुए बताया कि सारनाथ का चार शेरों वाला अशोक का स्तंभ। उन्होंने कहा, 'बस! और कुछ नहीं? तभी एक ने कहा, "सत्यमेव जयते।" "इसका मतलब क्या है?" उन्होंने फिर पूछा। "सत्य की जीत होती है," हममें से कोई बोल उठा। "चलो ठीक है, परंतु यह आया कहां से है?" सभी चुप थे। अधिकांश गीता से लिया हुआ समझ रहे थे, परंतु पक्का पता नहीं था। कुछ दिनों के बाद हम सबके हाथ में छपे हुए पन्ने थे, जिसमें भारत के राष्ट्रीय चिह्न के बारे में विस्तार से लिखा हुआ था। यह पर्चा भारतीय संग्रहालय, दिल्ली के निदेशक द्वारा निकाला गया था। *हमने जाना कि यह मुण्डकोपनिषद् के 3.1.6 से लिया गया है, 'सत्य की सदा विजय होती है।'*

देशवासियों व संपूर्ण विश्व के लिए भारत का इससे बेहतर संदेश और क्या हो सकता है?

OUR NATIONAL EMBLEM

C. SIVARAMAMURTI

Director, National Museum, New Delhi

PUBLICATIONS DIVISION

MINISTRY OF INFORMATION & BROADCASTING

GOVERNMENT OF INDIA

हमारा राष्ट्रीय चिह्न।



महिला का उत्साह

एक बार मैं दादाजी के साथ विज्ञान और प्रौद्योगिकी के एक राष्ट्रीय संस्थान (निस्टेड, नई दिल्ली) गई। निदेशक डॉ. अशोक जैन थे। उनके कमरे में एक महिला बैठी हुई थीं, जो कई वर्षों से विदेश में गीता पर अध्ययन व शोध कर रही थी।

अकसर ऐसा होता था कि जैसे ही किसी संस्थान में दादाजी के आगमन का पता चलता, बहुत-से वैज्ञानिक आदि निदेशक के कमरे में इकट्ठे हो जाया करते थे। परिचय आदि के बाद उस महिला ने गीता पर बोलना शुरू किया। काफी देर तक उन्होंने विभिन्न कार्यों का लेखा-जोखा दिया। फिर दादाजी ने उनके कार्य की प्रशंसा करते हुए पूछा, **''गीता में 'गुडाकेश' किसके लिए आया है?''** कुछ विचार करके वे धीरे से बोलीं, ''कृष्ण के लिए। हां! कृष्ण के लिए!'' दादाजी ने कहा, ''बहुत अच्छा! आप बढ़िया कार्य कर रही हैं। मुझे इसके बारे में बताते रहिएगा।'' उनके जाने के पश्चात् कुछ लोगों ने पूछ ही लिया, ''डॉ. साहब! बताएं गुडाकेश का अर्थ क्या है?'' यह जानकर सब अचंभित रह गए कि गुडाकेश का अर्थ है, *जिसने निद्रा को जीत लिया है अर्थात् अर्जुन!* दादाजी ने जानते हुए भी उस महिला का उत्साह बिल्कुल भी भंग नहीं किया।



सहअस्तित्व

डॉ. बलराज भाटिया याद करते हैं कि एक बार डॉ. कोठारी उनके घर आए। डॉ. बलराज भाटिया, उनके पिता प्रो. एम.एल. भाटिया व कुछ अन्य लोग बाहर लॉन में बैठे थे। अचानक एक मक्खी वहां मंडराने लगी। बैठे हुए एक व्यक्ति ने उसे मारने को हाथ बढाए। डॉ. कोठारी यह देख परेशान हो उठे और धीरे-से उस व्यक्ति से पूछा, ''आप उस बेचारी मक्खी को क्यों मारना चाहते हैं?'' वह व्यक्ति बोलने लगा, ''सर! ये मक्खियां बड़ी सरदर्द हैं। इनके शरीर पर विषैले कीटाणु होते हैं।।'' इस पर दादाजी ने उनसे कहा, **''पर्यावरण प्रबंधन का लक्ष्य 'हानिकारक' जीवों को समाप्त करने की ओर नहीं होना चाहिए, बल्कि उन जीवों के साथ इस तरह जीना सीखने की ओर होना चाहिए कि वे हमें कोई नुकसान न पहुंचा सकें।''**



युद्ध में अहिंसा

जैन धर्म के अहिंसा के व्यापक सिद्धांत का उपयोग दादाजी शिक्षा के क्षेत्र में करना चाहते थे। लेकिन कई बार मानव की हिंसक प्रवृत्ति इतनी सहज लगने लगती थी कि वे सोच में पड़ जाते थे कि क्या यही आत्मा की प्रकृति भी हो सकती है? ऐसे ही ऊहापोह में उन्हें कोनरेड लॉरेन्स की पुस्तक "ऑन एग्रेशन" मिल गई। जंगली पशु-पक्षियों पर किए गए अपने शोध में लॉरेन्स ने पाया था कि मनुष्य व रैटल सांप को छोड़कर कोई भी जीव अपनी ही प्रजाति के जीव को अंतिम सांस तक खत्म नहीं करता। आपसी झगड़ों को निपटाने के लिए जानवर "झांसा देने और धमकाने" का उपयोग करते हैं। ऐसा लगता है कि *मानवों की हिंसक प्रवृत्ति एक अर्जित किया गया व्यवहार है। यह आन्तरिक स्वभावजन्य नहीं है। दादाजी इस बात को प्रमाणित करने वाले एक उदाहरण की तलाश में थे और उन्हें वह मिल भी गया।*

यू.जी.सी के दिनों में बांग्लादेश के विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष दादाजी से मिलने आए। उन्होंने अपने जीवन का यह दृष्टांत दादाजी को सुनाया।

'सन् 1971 की लड़ाई के दौरान पाकिस्तान की सेना के अफसरों को विरोधियों की तलाश रहती थी। वे खोज में निकलते और अंदेशा होने पर व्यक्ति को पकड़ कर किसी निर्जन स्थान पर ले जाकर उसे मार डालते थे। एक शाम एक कैप्टन और कुछ अन्य जवानों ने मेरे दरवाजे पर दस्तक दी। दरवाजा खोलते ही उन्होंने मुझे उनके साथ चलने को कहा। मुझे ज्ञात हो गया कि अब क्या होने वाला है। मुझे जीप में बिठा वे चल पड़े। रास्ते में कैप्टन ने मुझे बता दिया कि हम एक झील के किनारे तुम्हारी हत्या करके तुम्हें झील में डाल देंगे। कैप्टन ने मुझे अंतिम प्रार्थना करने को कहा। अंतिम समय आया जान मैने प्रार्थना बोलना शुरू किया। मेरी फुसफुसाहट सुनकर कैप्टन ने मुझसे पूछा, 'क्या बोल रहे हो?" मैने कहा, "पवित्र कुरान पढ़ रहा हूं।" "तुमने कुरान शरीफ पढ़ी है?" कैप्टन ने पूछा। मैने कहा "हां!" मेरा धीमा पाठ जारी था और शायद वह कैप्टन के कानों तक पहुंच गया। वह थोड़ा प्रभावित हुआ और बोला "चलो, मैं तुम्हें मारूंगा नहीं, लेकिन तुम्हारे हाथ-पैर काट डालूंगा और छोड़ दूंगा।" खुशी से मै बोल पड़ा "अल्लाह ने मेरी प्रार्थना सुन ली!" और मैं अधिक उत्साह से

जोर-जोर से कुरान पढ़ने लगा। जीप चले जा रही थी कि अचानक कैप्टन ने अगली झील तक लगातार चलते रहने का आदेश दिया। समय गुजरता गया। अचानक कैप्टन बोल पड़ा, "मैंने निश्चय किया है कि तुम्हें बगैर कोई नुकसान पहुंचाए छोड़ दूंगा।" गाड़ी मेरे घर की ओर मुड़ गई। घर पहुंचते ही वह बोला, "खबरदार! जो किसी से इसका जिक्र किया, अपनी बीबी से भी नहीं। इसे ख्वाब की तरह समझना। अगर हमें पता चला कि तुमने वायदा खिलाफी की है तो हम तुम्हें उठा ले जाएंगे।" इस घटना को सुनकर दादाजी ने जैसे मान लिया कि *मानव मन प्रकृति से हिंसक नहीं है। यदि समय मिल जाए तो हिंसक प्रवृत्ति उलट कर मानवीयता में बदल सकती है।*

प्राचीन काल में जब मनुष्य हाथ से लड़ता था, तो एक का वर्चस्व साबित हो जाने के बाद दूसरे को माफी दे दी जाती थी; लेकिन अब *आधुनिक हथियारों के जमाने में संहार का कृत्य इतना जल्द हो जाता है कि मानव के मूल स्वभाव को पुनः व्याप्त होने का समय ही नहीं रहता।*

इसी उदाहरण से दादाजी को यह तसल्ली हुई कि युद्ध में भी अहिंसा संभव है और इसीलिए वे अहिंसा को शिक्षा का आधार बनाने की बात करते थे।



विनोबा जी का संथारा

दादाजी को गांधीजी से न मिल पाने का मलाल रहा। लेकिन काफी हद तक यह तब दूर हुआ, जब वे विनोबा जी से मिलने गए। विनोबा जी ने देह त्याग से पहले अन्न-जल का त्याग कर दिया था। जैन धर्म में इसे संथारा लेना कहते है। जैन साधु-साध्वियों तथा श्रावकों द्वारा यह व्रत आज भी लिया जाता है। अकसर लोग इसका विरोध करते हुए इसे आत्महत्या मानते हैं। दादाजी से जब इसके बारे में पूछा गया तो उनका कहना था कि संथारा या अंतिम दिनों में अन्न-जल का त्याग करना आत्महत्या बिल्कुल भी नहीं है। आत्महत्या करने वाला व्यक्ति मानसिक रूप से परेशान व विक्षिप्त-सा हो जाता है। उसके हृदय में जीवन के प्रति घृणा का भाव भर जाता है और यह कदम हिंसात्मक क्रिया है, लेकिन जो विनोबा जी ने किया वह एक शांत कार्य था। **वे प्रेमपूर्ण और करुणा से भरे हुए थे। उनका मन-मस्तिष्क पूर्णरूप से अहिंसक था। यह अंतिम निर्णय उनके जीवन संदेश के अनुरूप ही था।** डॉ. अजीत राम वर्मा लिखते हैं कि अहिंसा के बारे में डॉ. कोठारी का दृष्टिकोण हमेशा आलोकित करने वाला होता था।



उपहार

विदेश यात्रा से हाल ही में लौटे एक मित्र दादाजी से यू.जी.सी. दफ्तर में मिलने आए। उपहार स्वरूप वे उनके लिए पार्कर कंपनी का स्वर्ण जड़ित पेन सेट लाए थे। जैसे ही इन साहब ने पेन सेट दादाजी को भेंट देना चाहा, दादाजी ने नम्रता से नकारते हुए कहा, **"मेरी टेबल पर पड़े इस सरकारी पेन से मेरा काम अच्छा चल जाता है।"** लेकिन वे थे कि मानने को तैयार नहीं। उन्होंने बताया, "यह पेन स्वर्ण जड़ा है। मैं खास आपके लिए लाया हूं।" दादाजी के पुनः मना करने पर भी वे नहीं माने। इस पर दादाजी ने उनसे कहा, "यदि आप इतना आग्रह कर रहे हैं, तो इसे मेरे सचिव को भेंट कर दें।" उन्होंने सचिव को बुलवाया और पेन उसे भेंट किया गया। इस पर दादाजी ने सचिव से कहा कि वे इस सुंदर भेंट के लिए इन साहब को विशेष धन्यवाद दें।

अपनी देश-विदेश की यात्राओं में उन्हें कई उपहार मिलते थे। इन सभी को वे सरकारी संग्रहालय में जमा करवा देते थे। एक बार उन्हें एक कैमरा भेंट में मिला। मेरे काका का मन उस पर आ गया। वे इसे रख लेने का दादाजी से आग्रह करने लगे, लेकिन यह संभव नहीं था। एक बार फिसलन का मतलब था, नीचे ही गिरते जाना। फिर किसी ने उन्हें अपने स्वार्थ के लिए उलझाया नहीं।

एक बार डॉ. अजीत राम वर्मा ने दादाजी से पूछा कि क्या मेरी पत्नी सरकारी गाड़ी में बैठकर मेरे साथ जा सकती है। उन्होंने बड़ी सहजता से इसे मंत्र के रूप में कहा, **"जब इस तरह की दुविधा में हो, तब नियम को अपने हित के विपरीत रखकर विचार करो।"** आमतौर पर लोग इसके विपरीत ही करते हैं। औपचारिक व अनौपचारिक तौर पर देश-विदेश से कई हस्तियां दादाजी से मिलने आती थीं। विशेषकर यू.जी.सी के दिनों में। वे उन्हें कभी पांच सितारा होटल में नहीं ले गए। यू.जी.सी की कैंटीन में बना शुद्ध शाकाहारी सादा भोजन प्रेम से खिलाना उन्हें पसंद था। वे हमेशा कहते थे कि हमें करदाताओं के पैसों को व्यर्थ खर्च नहीं करना चाहिए।

लेकिन धन की आवश्यकता सभी को होती है। और कई उनसे प्रश्न करते कि

पैसे तो कमाने ही चाहिएं। इस पर वे एक अमरीकन अर्थशास्त्री का उद्धरण देते, **"जो व्यक्ति अपने स्वयं के लिए पैसे कमाने की इच्छा रखता है, उसकी जगह पागलखाने में है। लेकिन फिर भी हमें धन तो चाहिए ही होता है, दूसरों की भलाई के लिए, समाज को लौटाने के लिए चाहिए होता है।"**



अपनी स्थिति के प्रति कृतज्ञता

एक बार भारतीय राष्ट्रीय अकादमी, नई दिल्ली में दादाजी के साथ डॉ. अजीतराम वर्मा बैठे थे। वहां एक कर्मचारी था, जिसका नाम भी दौलत सिंह था। दादाजी ने उसकी तरफ देखा और कहने लगे, **"हम दोनों दौलत सिंह हैं। यह महज एक इत्तफाक है कि मैं यहां हूं और वह वहां। स्थिति इसके विपरीत भी हो सकती थी।"** दादाजी में यह अहम् भाव नहीं था कि जीवन में जो कुछ भी उन्हें मिला, वह उनकी कड़ी मेहनत व विलक्षण प्रतिभा का परिणाम था। वरन् वे इसे अद्‌भुत संयोग मानकर अपनी स्थिति के प्रति कृतज्ञता का भाव रखते थे।

एक बार दादीजी अपने पुराने दिनों को याद कर कहने लगीं, "हे भगवान! हमारे जैसे दिन किसी और को न दिखाए।" इस पर दादाजी ने उन्हें टोक कर कहा, **"हमें नहीं मालूम कि लोग क्या-क्या सहते आ रहे हैं। हमने तो कुछ नहीं देखा। हमें ऐसी बातें नहीं करनी चाहिए।"**

दादाजी लोगों की पीड़ा व दुःख के प्रति बहुत संवेदनशील थे। कई नवयुवकों, रिश्तेदारों व अन्य लोगों को उन्होंने अपने घर पनाह दी थी। पढ़ाया था। उनके जीवन को संवारा था। *जाति, धर्म, ऊंच-नीच के भेदभाव वाले विचारों का कोई भी संवाद मैंने घर पर कभी भी नहीं सुना।* उनकी संवेदनशीलता आगे की पीढ़ियों में कुछ इस तरह प्रकट हुई।

एक बार उदयपुर के हमारे घर में लेट्रिन की नाली बंद हो गई। जमादारनी आई और हाथ में थैली बांध कर उसने गटर में हाथ डाल कर नाली को खोल दिया। इस दृश्य को देखकर पापा ने अंदर आकर कहा, "यह काम तो बड़ा ही मुश्किल और घिनौना था। यदि मुझे कोई एक लाख रु. भी दे, तो भी मैं इसे नहीं कर सकता।" जमादारनी की तनख्वाह तब केवल 15 रु. महीना थी। कई वर्ष बाद मैं झांसी में थी। वहां भी लेट्रिन की नाली बंद हो गई। स्वयं की कोशिशें जब नाकाम हो गईं तो सफाई कर्मचारी बुलाने पड़े। आते ही उनमें से एक ने अपने कमीज की आस्तीन ऊपर चढ़ाई और एक हाथ गटर में डालने को झुका। देखते ही मेरे मुंह से निकल पड़ा, "हाथ मत डालना, हाथ मत डालना।" वह मेरी ओर

अचरज से देखने लगा। मैंने उसे प्लास्टिक की थैली दी, जिसे उसने अपने हाथ पर बांधा और तार इत्यादि से नाली खोल दी। साबुन से हाथ धुलवाने के बाद इस कार्य को करने के लिए जब मैंने उन्हें हाथ जोड़ कर बार-बार धन्यवाद दिया तो उनकी आंखों से पानी छलक आया।



गीता साथ तो रखो

कुछ वर्ष पूर्व मेरी बुआ का बेटा, विनीर भंसाली, अमेरिका पढ़ने जा रहा था और जाने से पूर्व दादाजी से आशीर्वाद लेने पहुंचा। दादाजी ने उसे गीता की एक प्रति भेंट की। विनीर ने विस्मय से कहा, "मैं तो भौतिकी पढ़ने जा रहा हूं! मुझे गीता पढ़ने का अवकाश कहां मिलेगा?" उसके हाव-भाव से दादाजी को यह ज्ञात हो गया कि उसकी समझ में गीता तो बूढ़े लोगों के पढ़ने की किताब है। दौहते के इस तरह कहने के बावजूद दादाजी ने उसे प्रेम से इतना ही कहा, "हां, तुम ठीक ही कहते हो। समय तो तुम्हें नहीं मिलेगा, मगर यह प्रति अपने पास तो रखो।" कुछ हट कर वे औरों से बोले, **"कृष्ण का सारा उपदेश जवान अर्जुन को संबोधित है, किसी वयोवृद्ध परिजन को नहीं।"**

विनीर ने गीता तो बहुत बाद में पढ़ी; लेकिन अपनी श्रद्धा को कुछ इस तरह प्रकट किया। 1992 में विनीर ने पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की तथा उसने कॉलेज शिक्षा के संस्थान *कैलिफोर्निया इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी (केलटेक) में अपने नानाजी के नाम "डॉ. डी. एस. कोठारी एनडाउड इन फिजिक्स," पुरस्कार की स्थापना की।* प्रतिवर्ष भौतिकी में प्रतिभावान विद्यार्थी को "डॉ. डी. एस. कोठारी पुरस्कार" प्रदान किया जाता है।



विज्ञान और चमत्कार

1960 के दशक में देश में कई विश्वविद्यालय स्थापित किए जा रहे थे। ऐसे में पुट्टपर्ती, (दक्षिण भारत) के साईं बाबा का भी आग्रह था कि वहां एक आधुनिक शिक्षासंस्थान खोला जाए। साईं बाबा की इच्छा से दादाजी परिचित थे। अतः साईं बाबा ने दादाजी को सपरिवार बंगलौर आने का निमंत्रण दिया। उपयुक्त समय पर दादाजी सपरिवार साईं बाबा के आश्रम पहुंचे। साईं बाबा उन्हें अपने कक्ष में ले गए।

औपचारिक परिचय आदि के बाद साईंबाबा ने हवा में हाथ घुमाया और दादीजी को भभूति दी, जिसे उन्होंने कागज की पुड़िया में रख लिया। साईं बाबा ने फिर हाथ घुमाया और एक नवरत्न की अंगूठी मेरे काका के हाथ में दे दी। कुछ देर बाद उन्होंने फिर हाथ घुमाया और ताईजी को लक्ष्मी जी का स्वर्ण लॉकेट थमा दिया। सब अचंभित रह गए। यह सब देखकर दादाजी परेशान से हो गए। तत्काल उन्होंने अपना हाथ आगे बढ़ा कर साईं बाबा से कहा, **"अब आप इस लॉकेट को मेरी मुट्ठी में भेज दीजिए।"** इस पर साईं बाबा मुस्कराए और कहने लगे, **"मैं अभी उस स्तर तक नहीं पहुंचा हूं।"** बातचीत आदि के बाद भेंट समाप्त हो गई। बाद में जब सभी गाड़ी में बैठकर लौट रहे थे, तो मेरे काका ने दादाजी से पूछा, "यह सब कैसे होता है?" दादाजी ने कहा, **"मैं नहीं कह सकता। मगर यह तो साफ है कि वे कोई धूर्तता नहीं करते। वे फ्रॉड (धोखेबाज) बिल्कुल नहीं हैं। 'होगा कोई जादू', मैं नहीं कह सकता। जब उन्होंने मेरे कहने पर यह स्वीकार किया कि वे लॉकेट मेरे हाथ में नहीं पहुंचा सकते, तो यह एक मूल्यवान बात थी। इतना स्पष्ट स्वीकारने के लिए हिम्मत चाहिए।"** फिर कहने लगे, **"प्रकृति के नियमों का उल्लंघन नहीं हो सकता। पदार्थ का व्यवहार विज्ञान सम्मत ही होगा। मगर मैंने सुना है, संकल्प शक्ति के बारे में, लेकिन इसमें मेरा कोई निजी अनुभव नहीं है।"**

इस तरह चमत्कार विज्ञान को न झुठला सका और विज्ञान ने चमत्कार का उसी रूप में आदर किया।



नोबल पुरस्कार से भारत वंचित

भारत भूमि व संस्कृति ने सदियों से विभिन्न धर्मों व जातियों को स्वीकार कर अपने यहां पनाह दी, पनपने के अवसर देकर स्वयं को समृद्ध किया; लेकिन आधुनिक विज्ञान के क्षेत्र में ऐसा न हो सका।

CASE INSTITUTE OF TECHNOLOGY

Department of Physics

UNIVERSITY CIRCLE
CLEVELAND 6, OHIO
SWeetbriar 5-1000

2 August 1963

Professor D. S. Kothari
Chairman
University Grants Commission
Malhura Road
New Delhi, India

Dear Professor Kothari:

I have sad news: it appears that the Case neutrino experiment will not be done in India. The reason is simple: Dr. Bhabha insists that any neutrino experiment done at KGF must be under the control of the Tata Institute. Collaboration is fine but control is unacceptable, hence the change in plans. I regret very much this turn of events. It does not appear at this stage to make our experiment impossible because a site outside of India seems suitable although not quite as good as KGF. However, I had looked forward to a most rewarding association and now this will not happen.

Sincerely,

F. Reines

Frederick Reines
Professor and Head
Department of Physics

FR:gfv

प्रो. राइन्स का पत्र।

प्रो. रामन द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान जर्मनी से पलायन करने के इच्छुक प्रो. मैक्स बोर्न् व अन्य वैज्ञानिकों को भारत बुलाना चाहते थे, लेकिन भारतीयों के आपसी मतभेदों के कारण वे यहां आकर भी अमेरिका चले गए। वहां कार्य कर उन्हें नोबल पुरस्कार मिला। प्रो. चन्द्रशेखर, डॉ. खुराना के अलावा कई वैज्ञानिक भारत लौटना चाहते थे, परंतु यहां की सरकारी बंदिशों के चलते नहीं आ सके। *नतीजा अच्छे वैज्ञानिकों की लगातार कमी होती गई और उच्च शिक्षण संस्थानों से छात्रों का विदेश पलायन करना आज भी लगातार जारी है और देश में विज्ञान की स्थिति दयनीय होती चली गई।*

इस तथ्य को उजागर करता है एक पत्र, जो नोबल पुरस्कार विजेता प्रो. राइनूस ने 2 अगस्त 1963 को अमेरिका से डॉ. कोठारी को लिखा था। इसका संक्षिप्त अनुवाद इस प्रकार है, "मेरे पास बुरी खबर है। ऐसा लगता है कि न्यूट्रीनों प्रयोग अब भारत में नहीं किया जाएगा। कारण स्पष्ट है। डॉ. भाभा का यह आग्रह है कि कोलार स्वर्ण खदान में किया जाने वाला न्यूट्रीनों प्रयोग पूर्णरूप से टाटा इंस्टीट्यूट के नियंत्रण में रहेगा। सहयोग करना अच्छा है, लेकिन नियंत्रण मान्य नहीं होगा। इसलिए अब योजना बदल दी गई है। मुझे इसका बहुत अफसोस है। हालांकि प्रयोग रोकना नामुमकिन है और दूसरा स्थान ढूंढ़ लिया गया है, परंतु कोलार खदान जैसा अच्छा नहीं।

मैंने एक बहुत लाभकारी सहयोग की आशा की थी, लेकिन अब वह संभव नहीं हो सकेगा।" बाद में प्रो राइनूस ने इटली में यह प्रयोग किया और उन्हें इसके लिए नोबल पुरस्कार मिला। भारत अपने ही संकीर्ण सोच की वजह से एक स्वर्णिम उपलब्धि से फिर वंचित रह गया।



बैरों का मुखिया

रविवार की एक शाम थी। 5 यूनिवर्सिटी रोड, दिल्ली में दादाजी के निवास पर रक्षा विभाग से संबद्ध सेना के अधिकारियों व वैज्ञानिकों की एक महत्त्वपूर्ण बैठक चल रही थी। तभी दरवाजे पर घंटी बजी। एक वृद्ध व्यक्ति सफेद अचकन, चूड़ीदार पायजामा व फेज टोपी लगाए खड़ा था और दादाजी से मिलने को आतुर था। खबर पाते ही दादाजी मीटिंग से क्षमा मांगते हुए उठे और उस आगतुंक के स्वागतार्थ पहुंचे। दोनों प्रेम से मिले, फिर दादाजी उन्हें पास के कमरे में ले गए, कुशलक्षेम पूछी और एक कप चाय भी उसके साथ पी। कुछ अन्य बातों के बाद दादाजी बोले, ''आप पधारे अच्छा लगा, लेकिन आज एक महत्त्वपूर्ण बैठक चल रही है। मैं आपके साथ अधिक समय न बिता पाऊंगा। इसका मुझे खेद है।'' वह व्यक्ति प्रसन्नता के साथ विदा हुआ। दादाजी पुनः बैठक में शामिल हो गए जो देर तक चली।

रात के भोजन पर घर के लोगों ने आतुरता से पूछा, ''वह व्यक्ति कौन था जिससे मीटिंग के बीच में आप मिलने पहुंचे। इतना वक्त बिताया?'' दादाजी ने मुस्कराते हुए जबाब दिया, ''पुराने मिलने वाले थे। एक दिन घूमते हुए मिल गए थे। मैंने घर आने का निमंत्रण दिया, सो मुझ से मिलने आए।'' ''परंतु थे कौन?'' एक ने अचरज से पूछा। दादाजी ने बताया, ''जब मैं इलाहाबाद में पढ़ता था, तब वह जवान था। विश्वविद्यालय की कैंटीन में वह बैरों का मुखिया था।''



अपने दिल में झांक कर देखें

एक बार सारे देश में आंदोलन हो रहा था। बसें फूंकी जा रही थीं, रेलें रोकी जा रही थीं। आगजनी और पत्थराव की घटनाओं से लोग चिंतित और परेशान थे। ऐसे माहौल में एक दिन राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी, नई दिल्ली में उपस्थित कुछ वैज्ञानिक देश के मौजूदा हालात पर चर्चा कर रहे थे। कुछ के विचार थे कि देश के संसाधनों को फूंक डालने वालों के खिलाफ सख्त कार्यवाही होनी चाहिए। कुछ उन्हें कड़ी सजा देने की वकालत करने लगे, ताकि आगे अन्य कोई ऐसा करने की हिम्मत न जुटा पाए। डॉ. कोठारी शांत बैठे सबकी बातें सुन रहे थे। तभी सबने डॉ. कोठारी के विचार जानने चाहे। डॉ. कोठारी ने कहा, **"मैंने कभी भी किसी को अपना घर या अपना सामान जलाते हुए नहीं देखा।"** यह सुनकर सब लोग स्तब्ध रह गए। किसी को समझ में नहीं आया कि इस बात का बसें जलाने व तोड़-फोड़ करने से क्या संबंध है? तब डॉ. कोठारी ने कहा, **"ऐसा क्यों है कि आम आदमी सार्वजनिक और सरकारी साधनों को अपना नहीं समझता? शायद इसलिए कि सरकारी सुविधाएं और सेवाएं लोगों की अपेक्षाओं के अनुरूप नहीं हैं। इसीलिए लोग उन्हें अपना नहीं समझते और जला डालते हैं। तोड़-फोड़ देते हैं। हमें अपने दिल में झांक कर देखना चाहिए।"**



खून तो सबमें एक है

एक बार बगीचे में घूमते हुए दादाजी माली से बातें कर रहे थे। उन्होंने माली से पूछा, **"बताओ, मुझमें और तुममें क्या फर्क है"**। कुछ सोचकर माली ने कहा **"साब! खून तो सबमें एक है केवल माथे का फरक है"**। मैंने देखा दादाजी के दोनों हाथ माली के सामने जुड़ गए। फिर वे दोनों बहुत देर तक बातें करते रहे।





दुर्लभ संयोग

यह शाश्वत सत्य है कि किसी के जीवन को संवारने में चांद, तारों, सूरज, पृथ्वी, हवा, पानी, वनस्पति का अनकहा और अप्रत्यक्ष योगदान और सहयोग रहता है। साथ ही रहता है, सभ्यता, संस्कृति और उन सभी व्यक्तियों का व्यक्तित्व एवं कृतित्व जो सदियों से पीढ़ी दर पीढ़ी अपना योगदान देते आ रहे हैं। दादाजी के जीवन में घटित विचित्र संयोगों में यह तत्त्व मैंने कुछ इस तरह देखा।

दादाजी का जन्म जैन परिवार में होने से अहिंसा और अपरिग्रह उन्हें विरासत में मिले। इसी से शाकाहारी और विनम्र बने रहने और सादगीपूर्ण जीवन जीने में सहायता मिली। उनके पिता अध्यापक थे और अंग्रेजी के अच्छे ज्ञाता माने जाते थे। शिक्षा के प्रति स्वाभाविक लगाव और अपने विषय में महारत हासिल करने की इच्छाशक्ति का बीजारोपण बचपन में ही हो गया। माता धर्मपरायण, निर्भीक, साहसी और दृढ़ निश्चय वाली थीं। उनमें जमाने के अंधविश्वासों और रूढ़ियों से ऊपर उठकर निर्णय लेने की विलक्षण क्षमता थी। यही वजह थी कि दादाजी के जीवन में उदारता, सहनशीलता



नोबल पुरस्कार विजेता प्रो. इल्या प्रिगोजिन के साथ।

और परिस्थिति की सहज स्वीकारोक्ति का द्वार खुल गया। तीनों छोटे भाइयों का बड़े भाई के प्रति लगाव व आदर तथा पूर्ण सहयोग दादाजी को गृहस्थी की समस्याओं से मुक्त कर वृहत् लक्ष्य की ओर बढ़ने में सहायक हुआ। यह भी दुर्लभ संयोग ही था कि दादाजी को जीवनसंगिनी के रूप में समान विचारों वाली समर्पित महिला मिलीं। *पत्नी का संपूर्ण परिवार के प्रति पूरी जिम्मेदारी निभाना और स्वयं के जीवन को अति सादगी और विवेक से चलाना दादाजी के जीवन की लय को बनाए रखने में बहुत मददगार साबित हुआ।*

उस जमाने में मेवाड़ के महाराणा ने जो 50 रु. प्रति माह की छात्रवृत्ति बी.एससी. की पढ़ाई के लिए दी, वह बहुत बड़ी बात थी। फिर पुनः महाराणा ने इंग्लैंड जाने से पहले परिवार की सहायतार्थ 3500 रु. का बिना ब्याज का कर्ज दिया और तीन वर्ष बाद 60 रु. प्रतिमाह की किश्त से चुकाने की सुविधा भी दी। यह सहायता एक आर्थिक संकट में पड़े होनहार विद्यार्थी के भविष्य निर्माण में सहायक होने वाली थी। यह कुछ ऐसा ही था, जैसे बड़े-बड़े राजघरानों के बावजूद खेतड़ी जैसी छोटी रियासत के महाराजा द्वारा स्वामी विवेकानंद को अमेरिका जाने के लिए सहायता देना। इस सहयोग ने विश्व में भारत की तस्वीर हमेशा के लिए बदल दी।

गुरु का मिलना दुर्लभ संयोग होता है। डॉ. मेघनाद साहा, लॉर्ड रदरफोर्ड से सीधा संपर्क और आइंस्टाइन व गांधी से प्रेरणा जीवन को साधने में सफल हुई। साथ ही गीता, समणसुत्तम, भक्तांबर स्त्रोत, ईशावास्य उपनिषद आदि उनकी सद्गुरु ही थी।

आजाद भारत में नौजवानों का उत्साह आसमान छू रहा था। नेहरूजी के नेतृत्व में रक्षा, विज्ञान और शिक्षा जैसे क्षेत्रों में पूर्ण स्वतंत्रता से कार्य करने का अवसर एक सुखद संयोग ही था। यही प्रेरणा और स्वतंत्रता उन्होंने फिर नये युवा वैज्ञानिकों, शिक्षकों और छात्रों को प्रदान की। जब भी वेतन बढ़ाने की मांग आती, वे यही कहते, **''ऐसे अवसर तुम्हें कहां मिलेंगे, जहां तुम्हें अपनी पसंद का कार्य करने के लिए पैसा भी मिलता हो। यदि तुम्हें अपनी रुचि का कार्य करने दिया जा रहा है, तो उसकी कुछ कीमत तो चुकानी ही पड़ेगी।''** एक गरीब देश के नौजवानों को इससे बढ़िया और क्या तसल्ली दी जा सकती थी।



यह शरीर अब तुम्हारा है

जयपुर में ही अपनी मृत्यु से दो-एक वर्ष पूर्व उन्होंने एक दिन परिवार के सदस्यों से कहा, **''यह शरीर अब तुम्हारा है। इसे जैसा मर्जी रखो। अब इससे मेरा मोह नहीं।''** वे कमजोर हो गए थे, लेकिन अध्ययन, मनन, ध्यान निरंतर चलता रहता था। अधिक घूमते नहीं थे। दादीजी को भी यही समझाते कि अब क्या रखा है इस शरीर में। दादीजी की भी धर्म में गहरी आस्था थी और दोनों के अन्तस् का भाव इस धरातल पर एक हो गया था।

मेरे पापा डॉ. ललित कोठारी जो चिकित्सक हैं, ने एक दिन दादाजी से कहा, ''अब आप उतना चल-फिर नहीं पा रहे हैं, जैसा कि पहले करते थे। क्या ही अच्छा हो कि एक साधारण चिकित्सा जांच करवा ली जाए।'' दादाजी ने अपना हाथ पापा के कंधे पर रखा और उन्हें छत पर ले गए। ऐसा व्यवहार वे अपने पुत्र के साथ विरले ही करते थे। दादाजी ने उन्हें समझाते हुए कहा, **''यदि तुम चाहते हो, तो अवश्य ही जांच करानी चाहिए, लेकिन तुम्हें यह भी समझना चाहिए कि अब मेरे लिए कुछ भी करना शेष नहीं रह गया है और मुझे अब जाने के लिए तैयार रहना चाहिए।''** फिर उन्होंने बताया कि आइन्सटाइन ने अपने परम मित्र नील्स बोहर की मृत्यु पर लिखा था, **''ब्रह्मांड के असीम रहस्यमयी विस्तार में यदि इस छोटे दूरस्थ गृह पृथ्वी पर सारी मानव जाति या जीवन मात्र भी उत्पन्न नहीं हुआ होता, तो भी उससे क्या फर्क पड़ जाता? फिर एक व्यक्ति के लिए तो कहना ही क्या?''**



अंतिम घड़ियां

जयपुर की बात है। 3 फरवरी 1993 का दिन आम दिन की तरह था। इंग्लैंड में भारत के उच्चायुक्त डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी घर पर दादाजी से मिलने आए हुए थे। काफी सारी बातें हुई। शाम को दादाजी को थोड़ी थकान महसूस होने लगी। उन्होंने रात को गर्म दूध लिया और लेट गए। दिल्ली से बड़े पापा और बड़ी मम्मी (डॉ लक्ष्मण कोठारी व श्रीमती सुशीला कोठारी) भी अचानक पहुंच गए थे। दादाजी का जुकाम बढ़ गया था। इसलिए उन्हें बिस्तर पर ही जग में गर्म पानी से भाप देने की कोशिश की गई। मम्मी के हाथ में जग था। दादाजी ने भी उसे थाम लिया और भाप लेने के बाद वे मुट्ठी खोल न सके। जोर लगाकर उनसे जग छुड़वाया गया। उन्होंने मम्मी की तरफ देखा और उनके मुख से यह आखिरी शब्द निकला, **'पुण्यवान!'** *मम्मी ने दादाजी व दादीजी की बहुत सेवा की थी, विशेषकर दोनों के अंतिम दिनों में।*

दादाजी शवासन में शांत लेट गए, लेकिन लेटने से पहले उन्होंने तकिये को टटोला और आश्वस्त हो गए। गीता, भक्तांबर स्त्रोत, माला आदि यथास्थान थे। उन्हें जल्दी ही नींद आ गई। पास में लेटी हुई मेरी दादीजी को भी नींद आ गई। दादाजी की तबीयत को देखते हुए मेरी बहन रक्षिता जो स्वयं डॉक्टर है, ने भी उसी कमरे में सोने का निश्चय किया। उसको भी नींद आ गई। 11.00 बजे घर के सभी सदस्य सो गए।

प्रातः 4.00 बजे अचानक रक्षिता की नींद खुल गई। उसे ऐसा महसूस हुआ कि जैसे वह पूरी तरह सचेत जाग गई है। आम दिनों की तरह 4.00 बजे उसकी नींद खुलना असामान्य था। उसकी पहली नजर दादाजी पर गई। वे सांस नहीं ले रहे थे। दौड़कर उसने पापा को बताया, "लगता है दादाजी सांस नहीं ले रहे हैं!"

दादाजी शांत चिरनिद्रा में सोए थे। किसी ने भी कोई कराह नहीं सुनी थी और न ही सहायता की कोई पुकार!

जैसा कि उनमें सदा से था, उन्होंने अंतिम समय में भी किसी को कोई तकलीफ नहीं दी।

जीवन यात्रा

जन्म	:	6 जुलाई 1906, उदयपुर, राजस्थान।
पिता	:	श्री फतेहलाल कोठारी, एम. ए अंग्रेजी प्रधानाध्यापक, महाराणा हाईस्कूल, उदयपुर।
माता	:	श्रीमती लहरबाई कोठारी।
स्कूली शिक्षा	:	उदयपुर एवं इंदौर।
मैट्रिक	:	महाराजा शिवाजीराव हाईस्कूल, इंदौर, 1922।
इन्टरमीडियेट	:	यू.पी. बोर्ड, 1924, प्रथम स्थान, संपूर्ण यू.पी. सेंट्रल प्रोविंस, सेंट्रल इंडिया तथा राजस्थान में।
छात्रवृत्ति	:	मेवाड़ के महाराणा द्वारा 50/- रु. प्रतिमाह की विशेष छात्रवृत्ति प्रदान की गई।
बी.एससी.	:	इलाहाबाद विश्वविद्यालय, 1926, प्रथम श्रेणी।
विवाह	:	श्रीमती सुजान कंवर सुराणा से जनवरी 1925 में।
एम.एससी	:	इलाहाबाद विश्वविद्यालय, 1928, प्रथम स्थान।
डेमोन्स्ट्रेटर	:	भौतिक विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय 1928-30, 1933-34।
पीएच.डी.	:	केविंडिश प्रयोगशाला, कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय, इंग्लैंड में, लॉर्ड रदरफोर्ड, प्रो. कपिट्ज़ा तथा प्रो. आर. एच. फाउलर के सान्निध्य में, 1933।
अध्यापन	:	रीडर फिर प्रोफेसर एवं अध्यक्ष भौतिक विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय 1934। लगभग 6 दशकों तक इस विश्वविद्यालय से संबंधित रहे।
नई प्रयोगशाला	:	भौतिक विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय में अनुसंधान का आरंभ और अल्बर्ट आइंस्टाइन का संदेश, 1939।
रक्षा विज्ञान	:	रक्षा मंत्री के प्रथम वैज्ञानिक सलाहकार नियुक्त, 1948-1961। अध्यक्ष, रक्षा अनुसंधान एवं विकास सलाहकार समिति, भारत सरकार, 1961।
रक्षा प्रयोगशालाएं	:	लगभग 12 रक्षा प्रयोगशालाओं की देश के विभिन्न भागों में स्थापना।

अद्वितीय पुस्तक :	''न्यूक्लीयर एक्सप्लोज़न एण्ड देयर इफैक्ट्स'' अर्थात् 'नाभिकीय विस्फोट एवं उसके प्रभाव' पर पुस्तक का लेखन। भारत सरकार द्वारा प्रकाशित, विश्वस्तरीय सराहना। 1956।
शिक्षा के क्षेत्र में कार्य :	अध्यक्ष, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली, 1961-1973
शिक्षा आयोग :	अध्यक्ष, शिक्षा आयोग (कोठारी आयोग), देश की शिक्षा में व्यापक परिवर्तन एवं विकास के लिए ''शिक्षा एवं राष्ट्रीय विकास'' का दस्तावेज सरकार को प्रस्तुत, 1964-1966।
दीक्षांत भाषण :	देश के लगभग 45 विश्वविद्यालयों में दीक्षान्त भाषण दिए।
वैज्ञानिक चयन :	विश्वविद्यालय के प्रतिभावान विज्ञान शिक्षकों को विशेष प्रोत्साहन हेतु योजना का प्रारंभ, 1963। एमेरिट्स वैज्ञानिक स्कीम।
वैज्ञानिक अनुसंधान :	प्रसिद्ध शोध ''दबाव द्वारा आयनीकरण का सिद्धांत,'' प्रतिपादित किया। वैज्ञानिक शोध के अलावा विज्ञान, शिक्षा, रक्षा जैसे क्षेत्रों तथा विज्ञान एवं अध्यात्म की संपूरकता आदि पर व्याख्यान दिए एवं व्यापक लेख लिखे। 'एटम एंड सेल्फ' व्याख्यान विशेष, 1978।
स्वाध्याय :	उपनिषद, गीता, ब्रह्मसूत्र, जैन आगम का गहन अध्ययन एवं साधना। महात्मा गाँधी में गहरी आस्था।
अन्य संस्थाएं :	अध्यक्ष, भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी, 1973-1976। अध्यक्ष, विज्ञान एवं तकनीकी शब्दावली आयोग, 1960। अध्यक्ष, लोकसेवा आयोग की चयन प्रक्रिया के लिए गठित ''रिक्रूटमेंट पॉलिसी एण्ड सलैक्शन मैथड,'' 1974। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी) तथा वैज्ञानिक एवं औद्योगिकी अनुसंधान परिषद् (सी.एस. आई.आर) के विकास में कार्यकारी सदस्य के रूप में प्रारंभ से तीन दशकों तक सक्रिय योगदान। राष्ट्रीय विज्ञान प्रतिभा खोज स्कीम का प्रारंभ। अध्यक्ष, विज्ञान शिक्षा सलाहकार समिति। एमेरिटस वैज्ञानिक स्कीम, समर इंस्टीट्यूट योजना, युवा वैज्ञानिक प्रतिभा पुरस्कार, राष्ट्रीय विज्ञान प्रदर्शनी, शिक्षकों के लिए विज्ञान के विषयों पर पत्रिकाएं प्रकाशित करवाना आदि नव योजनाएं प्रारंभ।
कुलाधिपति :	कुलाधिपति (चान्सलर) जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली (1981-1991)।

पुरस्कार एवं विशेष :
- पद्म भूषण, 1962 एवं पद्म विभूषण, 1973
- कई विश्वविद्यालयों द्वारा डॉक्टरेट की मानद उपाधि, जिसे उन्होंने विश्वविद्यालयन अनुदान आयोग के कार्यकाल के समाप्त होने पर ही स्वीकारा।
- लगभग 20 विभिन्न स्मृति व्याख्यान दिए, जिनमें निम्न प्रमुख हैं :
  पांड्या स्मृति व्याख्यान—"उच्च विस्फोटकों का धातु पर प्रभाव," भिलाई।
  कृष्णनन स्मृति व्याख्यान—"नाभिकीय विस्फोट," नई दिल्ली।
  दादाभाई नौरोजी स्मृति व्याख्यान—"शिक्षा, विज्ञान एवं राष्ट्रीय विकास"।
  जे.एन. टाटा स्मृति व्याख्यान—"विज्ञान एवं आत्मज्ञान," बंगलौर।
  श्री राजकृष्ण जैन स्मृति व्याख्यान—"विज्ञान और आध्यात्म पर कुछ विचार," दिल्ली।
  सरसरेमल बापना स्मृति व्याख्यान—"विज्ञान और अहिंसा" इंदौर।
- सोवियत संघ की विज्ञान अकादमी में विदेशी सदस्य के रूप में चयन।
- थर्ड वर्ल्ड एकेडमी ऑफ साइंस के फैलो।
- नेशनल फेडरेशन ऑफ यूनेस्को एसोसिएशन पुरस्कार तथा अनेक विज्ञान एवं शिक्षा के पुरस्कार।

देहांत : 4 फरवरी 1993, जयपुर।

डॉ. कोठारी पर पुस्तकों की सूची

Education and Character Building
Collection of Convocation Addresses
Editor : Feroz Ahmed
Published by **National Institute of Science Communication (NISCOM)**
Dr. K.S. Krishnan Marg, Pusa Gate, New Delhi-110012, India

Atom and Self
Collection of Memorial Lectures
Editor : Feroz Ahmed
Published by **New Age International (P) Limited , Publishers**
4835/24, Ansari Road, Darya Ganj, New Delhi-110002, India

Knowledge and Wisdom
Collection of Lectures and Addresses on University Education and Defence Science
Editor : Feroz Ahmed
Published by **New Age International (P) Limited , Publishers**
4835/24, Ansari Road, Darya Ganj, New Delhi-110002, India

Education, Science and Human Values
Essays in honour of Prof. D. S. Kothari
Editors : R. C. Mehrotra and Ramesh K. Arora
Published by **New Age International (P) Ltd., Publishers**

कीर्ति पुरुष
प्रो. डी. एस. कोठारी की जीवनी एक उपन्यास के रूप में
लेखक : **डॉ. धनराज चौधरी**
वाणी प्रकाशन, 21-ए, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

Vision and Values
SCIENCE . DEFENCE . EDUCATION . ETHICS
Essays in Honour of Dr. D. S. Kothari on His Birth Centenary
Editors : **Lalit K. Kothari and Ramesh K. Arora**
Published by PARAGON INTERNATIONAL PUBLISHERS
5, Ansari Road, Daryagnanj, New Delhi-110002

Science and Humanism
Editors : **Feroz Ahmed**
Galgotia Publications (p) Limited
5 Ansari Road, Daryaganj, New Delhi 110 002

Concept of Truth in Science and Religion
Editors : **K D Gangrude, L S Kothari, A R Verma**
Concept Publishing Company, New Delhi

Forty Years of Kothari Commission
Reforms and Reflections
Feroz Ahmed and Suresh Garg
Viva Books (P) Limited, New Delhi

Biographical Memoirs – Dr D.S.Kothari
Published by Indian National Science Academy, New Delhi

गीता ऑफसेट प्रिंटर्स प्रा. लि., नई दिल्ली–20 द्वारा मुद्रित।

विज्ञान, प्रतिरक्षा, शिक्षा, धर्म आध्यात्म, संस्कार, ऐसे अनेक गुण एक ही व्यक्ति में! विरले ही होते हैं ऐसे लोग। डॉ. दौलत सिंह कोठारी (1906-1993) कुछ ऐसे ही थे। स्वतंत्र भारत जब विकास के लिए अंगड़ाई ले रहा था, तब डॉ. कोठारी देश के महत्वपूर्ण नीति-निर्माताओं में से एक थे। हमारे देश की स्कूली शिक्षा हो या फिर उच्च शिक्षा, हमारी सेनाओं के लिए शस्त्रों का विकास हो या फिर भौतिकी के अंतरराष्ट्रीय सिद्धांतों की स्थापना; डॉ. कोठारी का योगदान अनुकरणीय रहा है। इस पुस्तक में डॉ. कोठारी के व्यक्तित्व और कृतित्व को अपनी स्मृतियों के झरोके से उन्हीं की पोती व वैज्ञानिक **डॉ. दीपिका कोठारी** ने संजोया है।

nbt.india
एकः सूते सकलम्
राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत
NATIONAL BOOK TRUST, INDIA

₹ 100.00
ISBN 812375851-0
9788123758510
19201614